अथ रसिकमोहन।

दोहा।

विघनहरन दुर्मतिदरन करन सकल कल्यान।
शिवसुत श्रीगननाथ को सब सुखदायक ध्यान ॥१॥
श्रीगुरुदेव मुकुन्द की लहि कै कृपा सहाय।
करिवे की पाई सकति ग्रन्थनि को समुदाय ॥
ब्रह्मा को सुत मानसिक गौतम परम प्रसिद्ध
ताके कुल कौटू मिसिर प्रगट भयो तपसिद्ध ॥
वेद कण्ठ चारौं करे अट्ठारहौं पुरान।
उपनिषधौ अरु शास्त्र सब भौ सब कलानिधान॥
बरनन कहँ लगि कीजिये करामाति समुदाय।
धोती लिये अकास मैं जाकी भुरवत वाय ॥५॥
कुल मैं कौटू मिश्र के उपजी मनसाराम।
जापैं राखत नित कृपा आपु राम सुखधाम ॥६॥

कवित्त।

आज महिमण्डल मैं कहै कवि रघुनाथ

जिते राजपूत राज पदवी धरत हैं। आपनी सभा में आप आपने मुसाहिब सों बैठे आठौं जाम ऐसी भांति उच्चरत हैं ॥ बखतबुलन्द ऐसे कौन पुहुमी पैं भूप गौतम गुमानी की जे समता अ-रत हैं ॥ चाहै जोइ राम सोई करै मंसाराम अरु चाहै मंसाराम सोई राम हू करत हैं ॥

दोहा ।

प्रगटे मनसाराम के महावीर बरिवगड ।
जाको वसुधा में भयो रवि सो तेज प्रचगड ॥८॥

कवित्त ।

सकल दिसान वसकरता सुरूपवान तेजवान ग्यानवान भाग्यवान गथ के । वेद बिधि बिहित सुकवि रघुनाथ कहै प्रतिपाल करता सकल पुन्य पथ के ॥ सब सों अजीत आपु सब कों जितैया आपु आपु सरवग्य आपु जनैया अकथ के । ऐसे मंसाराम के महीप बरिवगड जैसे काम पुरुषोतम के राम दशरथ के ॥ ९ ॥

दोहा ।

उन मोपैं [illegible] कृपा [illegible] चौरा गाउँ ।
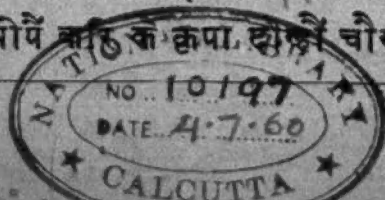
जाको जम्बूद्वीप में जगमगात है नाउँ ॥१०॥
जोजन भरि बारानसी पञ्च कोस इक कोस।
उत्तर दिसि दच्छिण लसै सुरसरि आपु परोस॥

सवैया बारानसी को।

कोऊ कथा सुनै कोऊ सुनावत भारत आदि पुरान हैं जोऊ। बेद पढ़ै कोउ व्याकरणै कोउ जोतिष वैदिक साहित कोऊ॥ कूजत है कोउ श्रीरघुनाथहिं पूजत कोऊ शिवाशिव कोऊ॥ मैं मन बीच विचारि लख्यो है बनारस में न बिना रस कोऊ॥ १२॥

कवित्त गङ्गाजी को।

सुमिरन कीन्हें ऐसे पातक-पलटि होत पुन्य को सरूप जैसे कीट भृङ्ग गोत है॥ दरसन पाये ऐसे दारिद पलटि होत सम्पति अँधेरो ज्यों उजेरो देखि पोत है॥ महारानी भागीरथी तेरो पानी पिये ऐसे कुमति पलटि होत सुमति उद्दोत है। जैसे सिद्धि औषधी परे तें कहै रघुनाथ तांबो कोड़ि जाति जैसे सुवरन होत है॥

दोहा।

ग्रन्थ रसिकमोहन कियो मैं यह उनको नाम ।
उपमादिक जामे लिखि अलङ्कार सुखधाम ॥१४॥
सम्बत् सत्रह से अधिक बरिस छानवे पाय ।
माघ सुकुल श्रीपञ्चमी प्रगट भयो सुखदाय ॥१५॥
बरनै उपमा आदि दै अलङ्कार गति रीति ।
अहो रसिक लखि रीझियो करि पढ़ियो सो प्रीति ॥
पहिले उपमा फेरि है अनन्वयालङ्कार ।
उपमानो उपमेय है कीन्हो बरविस्तार ॥ १७ ॥
आगे फेरि प्रतीप है सो पुनि पांच प्रकार ।
फिरि आगे रूपक लसै रह्यो भेद षट्धारि ॥१८॥
परिनामालङ्कार है इक उलेख है भेद ।
सुमिरन भ्रान्ति सन्देह ए तीन हरैं मतिखेद ॥१९॥
अपन्हुति षट्भेद सो आगे शोभित होत ।
उत्प्रेच्छा षटभेद सों ताहू कियो उदोत ॥ २० ॥
फेरि अपन्हव लसत है धरे आपु इक रूप ।
अतिशयोक्ति आगे लसत हैं षट्भेद अनूप ॥२१॥
चारि भेद सों लसतु है तुल्यजोगिता आप ।

दीपक तीन प्रकार सों सोहत तजि सन्ताप ॥
प्रतिवस्तूउपमा लखौ लखौ औरु दृष्टान्त ।
तीन प्रकार निदर्शना सोहत है अति कान्त ॥
वितरेकालङ्कार जो सो है एक प्रकार ।
एक प्रकार सहोक्ति है है विनोक्ति विस्तार ॥२४॥
समासोक्ति है एक औ औ परिकर है एक ।
परिकरांकुर एक है लहियतु सहित विवेक ॥२५॥
श्लेस सो तीन प्रकार है बरनत हैं मतिधाम ।
अप्रस्तुति-परसंश को एक भेद अभिराम ॥२६॥
प्रस्तुतांकुर को कह्यो एक भेद कवि गोत ।
भेद सो परजायोक्ति के द्वै विधि करत उदोत ॥
बरनत हैं व्याजोक्ति कों सकल सुकवि इक रीति ।
तीन भांति आक्षेप को बरनत हैं करि प्रीति ॥
सुकवि बिरोधाभास को बरनत एक प्रकार ।
षट् परकार बिभावना बरनत करि विस्तार ॥२८॥
विशेषोक्ति को भेद इक सु असम्भव को एक ॥
तीनि असङ्गति के कहत सुकवि सदा गहि टेक ।
सात भेद हैं विषम के औ सम के हैं तीन ।

एकै भेद विचित्र को बरनत सकल प्रवीन ॥३१॥
अधिक सो दोइ प्रकार को बरनत सहित विवेक ।
भेद अलप को एक औ औ अन्योन्यहि को एक ॥
बरनैं सुविशेसोक्ति को कविजन तीन प्रकार ।
बरनत हैं व्याघात को द्वै विधि करि विस्तार ॥
कारणमाला एक है है एकावलि एक ।
मालादीपक एक है सार अलंकृति एक ॥ ३४ ॥
क्रमिका इक परजाय द्वै परिवृत एकहि रूप ।
परिसङ्ख्या है एक औ विकलप एक सरूप ॥३५॥
समुच्चयहु के भेद द्वै बरनत सहित विवेक ।
कारक-दीपक को कहत भेद सुकवि सब एक ॥
इक समाधि प्रत्यनीक इक काव्यार्थापति गांस ।
काव्यलिङ्ग के भेद द्वै है अर्थान्तरन्यास ॥ ३७ ॥
एक विकस्वर एक है प्रौढ़ोकति सुभ रीति ।
संभावनासु एक है एकै मिथ्याधिवसीति ॥ ३८ ॥
एक अलंकृत ललित है प्रहर्षनो है तीन ।
सुविषादन इक चारि विधि है उलास गुन लीन ॥
अवग्याहु है एक औ कहै अनुज्ञा एक ।

लेसा के है भेद हैं हैं मुद्रा को एक ॥ ४० ॥
अलङ्कार रत्नावली इक इक तदगुन नाम ।
अनुगुन इक औ एक है मिलित सु अति अभिराम
अलङ्कार सामान्य इक औ उनमीलित एक ।
अलङ्कार वैसेष एक लहियतु किये विवेक ॥४२॥
गूढ़ोत्तर है एक औ चित्रोत्तरलङ्कार ।
सूछम इक औ एक है पीहित सुभ विस्तार ॥
इक व्याजोक्ति गूढ़ोक्ति औ विव्रतोक्ति इक मानि।
युक्ति एक लोकोक्ति इक इक छेकोक्ति बखानि ॥
काकु एक वक्रोक्ति इक एकहि मैं द्वै भेद ।
सुभावोक्ति एक एक है भाविक तजि कै खेद ॥
अलङ्कार उदात्त है हैं ताके द्वै भूप ।
अलङ्कार है उत्तरा औ एक पूरुबरूप ॥ ४६ ॥
अलङ्कार अत्युक्ति इक औ यक प्रेमात्युक्ति ।
सब कवि बरनन करत हैं औरो एक निरुक्ति ॥
अलङ्कार प्रतिषेध इक विधि औ इक इक हेत ।
अलङ्कार के नाम ए रूप लखि सुख देत ॥ ४८ ॥

इति श्रीकवि रघुनाथ बन्दीजन काशीवासी

विरंचि तेकाव्य रसिकमोहने अलङ्कार नाम कथनं प्रथम तन्त्वः॥ १॥

उपमा लच्छन दोहा।

जहँ साहस ते होत है सोभा को परकास।
अलङ्कार उपमा तहां बरनत सुमति-निवास॥ १॥

पूरन उपमा लच्छन।

उपमा अरु उपमेय अरु अरु बाचक अरु धर्म।
इन चारों मिलि होत है पूरण उपमा धर्म॥ २॥

उदाहरन।

फूलि उठे कमल से अमल हितू की नैन कहै रघुनाथ भरे चैन रस सिअरे। दौरि आए भौंर से करत गुनी गुन गान सिद्ध से सुजान सुख सागर सों निअरे॥ सुरभी सी खुलनि सुकवि की सुमति लागी चिरिया सी जागी चिन्ता जनक के जिअरे। धनुष पै ठाढ़े राम रवि से लसत भोर कैसे नखत नरिन्द भए पिअरे॥ ३॥

अपरंच।

गली द्वार दहलीज आंगन लौं आगमन

पच्छी के कहत लख्यो पच्छिन के सोर सो। नषत से सोच छपे कहै रघुनाथ लख्यो मोद सो अमल हियो कमल सरोर सो॥ सनमुख होत दिनकर सो सुघर प्यारो मन में ते मान सो चलत भयो चोर सो। सारो स्याम टरि गई राति सो नि-हारी सखी प्यारो जू को आनन निकसि आयो भोर सो॥ ४॥

अपरंच।

चन्द सो आनन चांदनी सो पट तारे सी मोती की माल विभाति सी। आंखें कुमोदिनि सो हुलसीं मनिदीपनि दीपक दान की जाति सो॥ है रघुनाथ कहा कहिये पिय की तिय पूरन पुन्य विसाति सो। आई जोन्हाई की देखिवे को वनि पून्यो की राति में पून्यो कि-राति सो॥ ५॥

अपरंच।

हितुन के तन की तपनि मेटि देत सुख है करि सुमुख करि अमर अमर सो। मन-

हित लोगन के चित को विरति बूभि उनको दरसि कै परसि देत जर सो ॥ कौन आज दूसरो है कहै कवि रघुनाथ भुजदण्डवली बरिबंड नरवर सो । बसुधा के बीच जाको जाग्यो जगमगत है जस सुधाधर सो प्रताप दिवाकर सो॥ ६॥

तवकोपमा लच्छन।

दोहा।

अर्थ अनेकनि को जहां साहस बरनन होइ।
जथा तथा तवकोपमा कहत सुकवि सुख भोइ॥ ७॥

उदाहरन॥

जैसो फव्यो फटिक-सिलानि सो सँवारो मग तैसो रह्यो जगि रूप फूलन सो प्यारो को। जैसो चारु चौतरा बिछौना बिछ्यो तैसो सेत तैसोई सुगन्ध छायो बेलि न्यारी न्यारी को॥ एक रसना तें मोपैं सखी न सराह्यो जात कवि रघुनाथ सुख राति को उज्यारो को। जैसो लस्यो तारन समेत तारापति तैसो मोतिन के भूषन समेत मुख प्यारी को॥ ८॥

अपरंच।

गढ़ चिलिबिलिया को भाख्यो राजकुमारनि राखि राजपूत जे रखैया सदा लाज के। ताको फते करिबे को इन्ना को हुकुम भयो उद्धत उदण्ड वरिबण्ड महाराज के॥ खंधक में पैठि सफीलन चढ़ि कूदे बीच रघुनाथ ऐसे गोल सुभट समाज के। समुद को जल चारों ओर तें झपटि जैसे भीतर भरत जाइ बूड़त जहाज के॥ ८॥

अनन्वय लच्छन।

दोहा।

उपमा अरु उपमेय जहँ एक वस्तु के होत।
ताहि अनन्वय कहत हैं करता ग्रन्थ उदोत॥ १०॥

उदाहरन सवैया।

तूं सब की सिरमौरि सोहागिनि तोहिं बड़े तप तें पति पाई। हारतीं देव अदेवन की तिय तेरी बिलोकत ही चतुराई॥ तेरी कहूं उपमा न तिलोक में मैं रघुनाथ सही ठहराई। गाइ औ

गावन जोग बलऊ ल्यौं तेरी सो तेरिये सुन्दर-
ताई ॥ ११ ॥

अपरंच कवित्त।

तेरे पांइ ऐसे तेरे पाँइ कहै रघुनाथ नख से
तेरेई नख सोभा के अयन हैं। जंघा ऐसी जंघा
है नितम्ब से नितंब तेरे लंक सो तेरोई लंक
देखत चयन हैं॥ तेरे कर ऐसे तेरे कर हैं सुघर
कुच तेरेई से तेरे कुच श्रीफलजयन हैं। बदन
सो बदन बयन से बयन एरी प्यारी तेरे नैन
ऐसे तेरेई नयन हैं ॥ १२ ॥

अपरंच।

तेग बल त्याग बल प्रगट कियो है जौन
भूप बरिवण्डसिंह सुनो तीन अस है। जाको
प्रभा देखि देखि मन में लजात जात तेजभरो
सूर ससि भरो सुधारस है॥ काहि उपमान
कीजै कहै कवि रघुनाथ कौन ऐसो दूसरो ज-
गत कीन्हें बस है। रावरे प्रताप सो है रावरो
प्रताप और रावरे सुजस ऐसो रावरो सुजस है॥

उपमा उपमेय लच्छन ।

दोहा ।

उपमा अरु उपमेय जहँ उपमा अरु उपमेय ।
होत परसपर कहत सब कवि उपमा उपमेय ॥ १४ ॥

उदाहरन ।

और तो हौं कहा कहौं देखतही रीझि जैहौ ऐसी कछु अङ्गनि तें सुकुमारि अति है । गुन की है खानि सील सोभा को निधान जाकी कीबे कों बखान बाक बानी को न गति है ॥ एहो रघुनाथ तिय तीसरी बनाइबे कों आगे को न चली फेरि करता की मति है । सति करि मानो तीनो लोकनि में जानो एक रति ऐसी प्यारी प्यारी ऐसी एक रति है ॥ १५ ॥

प्रतीप लच्छन ।

दोहा ।

उपमा कहँ उपमेय जहँ कलपित सो परतीप ।
भूषन नीहू रसनि को बरनत सुकवि महीप ॥ १६ ॥

उदाहरन ।

चरन करन सम जाकी कहै रघुनाथ सरद समै को फूल्यो चारु अरबिंदु है । जाकी बार सु-

कुमार ऐसे मखतूलतार नैन से निहारि देखो माधो को मलिंदु है ॥ बोलन सो अमी जाके अधर सो अनुराग मोहनता ऐसो जाको मदन नरिंदु है । ऐसो बाल लाल हौं तिहारे लिये ल्याऊँ जाके ओप सी उजेरो आंग आनन सो इन्दु है ॥ १७ ॥

द्वितीय प्रतीप लच्छन।

दोहा।

लहि उपमेय कछू जहां वर्न्य निरादर होइ।
भेद दूसरो कहत हैं यह प्रतीप सब कोइ ॥ १८ ॥

उदाहरन।

निरखि निरखि कटि कहतो हो कहा ऐसी ऐसी हौं विचारि देख्यो सिंह हू को लङ्क है। चखन को लखनि तिरीछो गड़ै हो के बीच ऐसो तो मनोज हू को बन्यो बान बंक है॥ कर को ललाई रघुनाथ गाईं कौल हू में कुच को कठोरताई श्रीफल निसंक है। कीजिये न गरब दूतेक सखी प्यारी जू के मुख ते न जनो कछू पूनो को सयंक है ॥ १९ ॥

तृतीय प्रतीप लच्छन।

दोहा।

बरननीय उपमेय के लाभ निरादर और।
तीजो भेद प्रतीप को बरनत कवि सिरमौर ॥ २० ॥

उदाहरन।

कहा है कठोर घोर सोर सुनि एरे काग तोसो तो है मोर महा पालक दरद को। कहा तेरो बास मति अंध को करैया बेल रघुनाथ तो सो गन्ध कौल को गरद को ॥ कहा तेरो बेग वाय छेद करै ही में आय तोसो तो है बान जानि मैन से मरद को। कहा तेरो तेज तीखो एरे चण्डकर आजु मोसो सुनि तो सो सुधाधर है सरद को ॥ २१ ॥

चतुर्थ प्रतीप लच्छन।

दोहा।

बरननीय तें झूठ जहँ उपमा कहिये आनि।
चौथो भेद प्रतीप को कविकुल कहत बखानि ॥ २२ ।

उदाहरन।

लखि ठकुराइनि के पाइन की सोभा तुम ऐसो जो कहत हो कि ऐसे नीरजात हैं। गात

की गोराई सम गाई रुचि कंचन की ओठ की ललाई सम पाए नये पात हैं ॥ यामे तीन चल कछू देखि आई हौं कन्हाई हँसन दसन सम मोती अवदात हैं । नैनानि को निधि प्रानप्यारी को बदन देखि ऐसो जो कह्यो है विधु सो तो झूठी बात है ॥ २३ ॥

अपरंच ।

अरुनाई चपलाई कहै कबि रघुनाथ गोराई औ स्यामताई जेती चहियतु है । मोहन वसी-करन सोखन उचाटन आकरषन बेधवे की रीति गहियतु है ॥ देखि के विचार कीन्हों अ-खिल अलोक यामे ए गुन कन्हैया जू के नैन ल-हियतु है । कंज खंज मीन मधुकरनि में रहे मैन बान मे जे कहैं ते वे झूठे कहियतु है ॥ २४ ॥

पंचम प्रतीप लच्छन ।

दोहा ।

उपमाने कहिये व्यरथ उपमेये मनमानि ।
यह प्रतीप कवि कहत हैं भेद पांचवों जानि ॥ २५ ॥

उदाहरण ।

पाँइन को छवि आगे कहा नए पल्लव हैं

नखन के आगे कहा नखत की रिधि है। कटि आगे कहा है कटारिहू को अनो चारु कुच आगे कोक कहा कहि ऐसो सिधि है॥ देखे को हरष गुर गूंगे को सो करि राख्यो रघुनाथ प्यारे देनी उपमा अविधि है। महारानी राधिका के आनन अमल आगे कहा है कमल और कहा कलानिधि है॥ २६॥

अपरंच।

छीरनिधि जायो गायो निगम पुराण छायो बपुष प्रभा सों लोन्हे तारन जगतु है। अनुज कहायो कमला को कहै रघुनाथ नातो पायो विष्णु सों सो जानत जगतु है॥ माथे पें महेश राख्यो मित्र कहि मित्र भाख्यो ऐसो अजउ तऊ तुलताइ न लहतु है। भूप बरिबंड जस रावरे कुलीन आगे धाकर सो देखत सुधाकर लगतु है॥ २७॥

रूपक लच्छन।

दोहा।

विषई जहां अभेद है विषय जहां तद्रूप।
अलङ्कार रूपक तहां बरनत दुबिध अनूप॥ २८॥

न्यून अधिक सम होत है दोऊ तीन प्रकार।
एहिँ बिधि कीं षट भेद को रूपक कियो पसार २९॥

विषई अभेद सम यथा।

सवैया।

बारिद बार सही रघुनाथ कहै जिन चारु किये दृग मोर हैं। ईछन कंज सही सुथरे जिन लोचन भौंर किये बरजोर हैं॥ बोलनि जो सो सही मुकता जिन आंखिन को किये हंस किसोर हैं। प्यारी को आनन इन्दु सही जिन किन्हे गोबिन्द के नैन चकोर हैं॥ ३०॥

अपरंच कवित्त।

लोचन सजल मकरन्द भरे अरविन्द खुले खुली बूंद पाँति मधुप किसोर की। स्वेदकन ओस पीरो यही रंग रघुनाथ स्वासा सो बयारि बहै सौरभ झकोर की॥ भूषन के मोती सेष भेष से हैं तारागन मुसकनिधुनि कछू चिरिन के सोर की। प्यारीजू के बदन पै मदन बिनोद भेषी देखो आजु भोरही सकल सोभा भोर की॥ ३१॥

॥ अपरंच सवैया ॥

साहस कै वन मे हरि वा दिन जौन दवानल पान कियो तो। ऐसि तचे नख तें सिख लौं नहिं जाहिं छुये छिनु मैं हूं छियो तो ॥ वैसी सभै रघुनाथ की सौंह कृपा करि जो उपकार कियो तो। है सुधि सो कुच कुम्भ अमी के लगाइ हियो सियराय दियो तो ॥ ३२ ॥

विषई अभेद न्यून यथा सवैया।

आई हौं देखि सराहे न जात हैं या विधि घूंघट में फरके हैं। मैं तो यों जानी मिले दोउ पोके ह्वै कान लख्यो कि उन्हे हरके हैं ॥ रंगनि ते रुचि ते रघुनाथ वे चारु करे करता कर के हैं ॥ अंजनवारे सखी दृग प्यारी के खंजन प्यारे बिना पर के हैं ॥ ३३ ॥

अपरंच।

आपने हाथनि सौं करतार करे अतिही जग बीच उज्यारे। देखतही रहिये रघुनाथ जुदे नहिं कीजे लगें अति प्यारे ॥ सौरभ सो परि-

पूरन पुष्ट पवित्र भरे रस आनद द्यारे । बारि बिना उपजी अति सुन्दर प्यारो के लोचन बारिज न्यारे ॥ ३४ ॥

विषई अभेद अधिक यथा सवैया ।

एक तो मान को मै रह्यो चढ़ि दूजे तुमै बिनु साथ निहारैं । तीजे हितू एहि ओर को बूझि के झूठी महा मन बीच विचारैं ॥ रावरे जो रघुनाथ बलाइ ल्यों या डर सों हम सासन टारैं । प्यारो के ईछन तीछन बान हैं घायल देखिलही करि डारैं ॥ ३५ ॥

अपरंच ।

आगे तो आपु अकेलो रह्यो अब साज समाज घनो सँग छायो । बेर बड़े निज बूझत है मिलि कूजत है कलकण्ठ मैं भायो ॥ औधि को आस बचीं अबला अब चाहतु है रघुनाथ सतायो । ऊधो मिले मधुसूदन सो कहियो ब्रज मैं बहुरो मधु आयो ॥ ३६ ॥

अपरंच ।

केसर रंग के अङ्ग की बास बसी रहैं पाइ

से पास घरैगो। चित्र मई छिति भीति सबै रघुनाथ लसै प्रतिबिम्बनि घेरो॥ प्यारी के रूप अनूप की और कहां लौं कहौं महिमा बहुतेरो। आनन चन्द को फैलो अमन्द रहै घर में दिन राति उजेरो॥ ३७॥

विषय तद्रूप रंजन अनुभवोक्ति यथा कवित्त।

कानन के चारी तन भारी हैं चपल महा थिरता न गहैं कहूं एक घरी हारि कै। कहै रघुनाथ पर पलकन फरकाय कौतुकै करत मद जोबन को धारि कै॥ कजरारे चीकने बिसद भारे रंगनि से दुचितई डारें देखै सुचितई टारि कै। बाहिर न जाहि कोऊ लेइगो बझाइ देखि तेरे नैन खंजन ए खंजन बिचारि कै॥ ३८॥

अपरंच सवैया।

कौने दई यह सीख तुम्हें तुम जो इतनो हठ आजु गहा है। एतेहु पैं न प्रतीत करौ बहुरो दिवदेव को चित्र चहा है॥ झूठि को बोलि तजै धरमै रघुनाथ कहै ऐसो कौन बड़ा

है। तो कुच सम्भु को सोहँ कियो जब है तब शम्भु को साहँ कहा है ॥ ३९ ॥

विषय तद्रूपरंजन न्यून यथा।

रसभरे जसभरे कहै कवि रघुनाथ रंगभरे रूपभरे खरे चङ्ग काल के। कमला निवास परिपूरन सुवास आस भावती के चंचरीक लोचन चपल के ॥ जगमग करत भरत दुति दोऊ पोखि जोवन दिनेश के सुदेश भुज बल के। गाढ़वे के जोग भए ऐसे हैं अमल फूले तेरे नैन कमल कमल विनु जल के॥ ४० ॥

विषय तद्रूपरंजन अधिक यथा।

स्यामताई जटाजाल सुरसरी मोती माल ससिकला भाल नख व्याल केस काले हैं। मलय विभूति स्याम कंचुकी सो रघुनाथ फटिक फनी के गज खाल गरे घाले हैं ॥ वनक विलोकि बाँकी बरने कहां लौं पर एतिक कहत सेवें ताकी बड़े ताले हैं। पाले हैं मनोज इन प्रेम करि आले प्यारी संकर सौं तेरे कुच संकर निराले हैं॥ ४१ ॥

परिणामालङ्कार लक्षन।

दोहा।

उपमा मिलि उपमेय सों करै ताहि के काम।
ताही सों सब कहत हैं अलङ्कार परिणाम ॥ ४२ ॥

उदाहरन।

कय के मनाइबे कों आपु आइ आगे ठाढ़े हाथ जोरे बिनै करें चूक परी छल तें । अब के बकसि दीजे एतो कहा रोस कीजे प्यारी सो पतीजी मति जो सुनो चपल तें ॥ बिछुरे को दुख सो तो आपुही तें दूतै जानो रघुनाथ को सों छाड़िबे को मान बल तें । बलि गई जैसे बैरि बैरि कहो नाहीं तैसे एकबेर हां हू कहो आनन कमल तें ॥ ४३ ॥

अपरंच सवैया।

आवत मोहि बिलोकि बलाइ ल्यों छोड़ि सखीन सों बात सोहाती। आठ अमेठि नचाइ के लोचन भौंह चढ़ाइ क्यों होति हो ताती ॥ जानि परी रघुनाथहिं सो सब जी।वह आज गई कहि घाती। लीजिये याती है सोंहन की उनके कर-कंज-लिखी यह पाती ॥ ४४ ॥

उल्लेख लच्छन ।

दोहा ।

एकहि जहां अनेक जन बरनत भांति अनेक ।
एक रीति उल्लेख यह कबि करि कहत विवेक ॥ ४५ ॥

उदाहरन कवित ।

सखी को समूह कहै बिधि सची रचा दूजो सेवकिनो कहैं कामना को बेलि नोको है । रघु-नाथ गुन देखि गिरा कहैं गुरुजन दौरानी जे-ठानी कहैं आलंबनि जो को है ॥ अबही तो दिन दस पांच भया गौना आये गाइबे के जोग भई कीरति जो तो है । चंपे की सा माल जाने प्यारो नन्दलाल देखि सौतिन को जाल कहै बाल साल ही की है ॥ ४६ ॥

अपरंच कवित्त ।

कोऊ कहै गगन को गङ्गा को सरोरुह है कोऊ कहै व्योम बानो रानी को सदन है । कोऊ कहै जल को जम्यो है बिंब रघुनाथ कोऊ कहै सागर को सुधा मैं नदन है ॥ कोऊ कहै जामिनी को कंद है अनन्द मढ्यो कोऊ कहै जस जाको करता

मदन है। मोहि परयो जानि मेरी मति अनुमानि यह चांदनो तिया है ताको चन्द्रमा बदन है ।

द्वितीय उल्लेख लच्छन ।

दोहा ।

एकहि जहां अनेक विधि एक कहत गहि रीति ।
दूजो भेद उलेख को बरनत कवि करि प्रीति ॥४८॥

उदाहरन कवित्त ।

कंजन अमलता में खंजन चपलता में कलता में मीन कलता में बड़े ऐन के । प्रेम में चकोर चोर नेम के निबाहिबे में कहै रघुनाथ ठग ठगिबे कों सेन के ॥ डँसिबे को भौंर डीठि फ- सिबे को बंसी चेत गसिबे को जन्त्र हेत चैन हूं अचैन के । यामे झूठी है न प्यारे हौ में आइ लागिबे को प्यारी जू के नैन ऐन तीखे बान मैन के॥

सुमिरन लच्छन ।

दोहा ।

निरखि कछू उपमान कों सुधि कीजे उपमेय ।
सुकवि सुमत तासों कहत अलङ्कार सुखदेय ॥ ५० ॥

उदाहरण कवित्त ।

नैन अनुहार नील नीरज निहारें बैठे बैन

अनुहारि बानी बीन की सुन्यो करैं । चरन क-
रन रद छदन की लाली देखि ताके देखिबे को
फूल जपा के लुन्यो करैं ॥ रघुनाथ चाल हेत गेह
बीच पालि राखे मुथरे मराल आगे मुकता चुन्यो
करैं । बाल तेरे गात की गोराई सोंह ऐसो
हाल प्यारे नंदलाल माल चंपे की दुन्यो
करैं ॥ ५१ ॥

अपरंच सवैया ।

पन्नग मीन कपोत चकाचकी बाल मरालन
केते गहे हैं। विद्रुम औ मुकुता पुखराज बि-
साहिबे को अति नेह नहे हैं॥ देख्यो तुम्हे जब
सों तब सों उनके ढंग ए रघुनाथ लहे हैं॥ रोज
तमासे को जात तिते जिते आज सों फूलि स-
रोज रहे हैं ॥ ५२ ॥

भ्रांति लच्छन ।

दोहा ।

है औरे औरे कहै सहस रूप अनुमानि ।
अलङ्कार कबि कहत हैं ताहि भ्रांति पहिचानि ॥५३॥

उदाहरन कबित ।

बोलत में मोती से झरत जानि हंस दौरैं

बार मेघ मानि बोले केकी बंस भूल्यो है। कूजत कपोत पीत जानि कण्ठ रघुनाथ फूल के हरा पै मैन भूला जानि भूल्यो है। ऐसी बाल लाल चलो कुंज लौं देखाऊँ तुम्हें जाको ऐसो आनन प्रकाश बास तूल्यो है। चितवै चकोर जानै चन्द्र है अमल घेरे भौंर भीर मानै या कमल चारु फूल्यो है॥ ५४॥

अपरंच सवैया।

जानति है कि गए मथुरा चढ़ि मारन कंस कुड़ावन ओलै। फागु के आवत जैसी दसा भई सो रघुनाथ सुनो मन जो लै॥ कै सुधि होरी के खेलन की भुलये सिगरी सुधि नन्द के टोलै। फेंट गुलाल भरे पिचकारी लै बाल गोपालहिँ ढूँढ़ति डोलै॥ ५५॥

अपरंच कवित्त।

साधुन के कान धुनि वेद के समान जानी शितुन के कान धुनि ताल राग गान को। समुद को धुनि दिगवासिन के कान जानी अचल नि-

वासिन के कान जलदान को। भूप बरिबगड वसुधा के मारतण्ड कहै कवि रघुनाथ बात परम प्रमान को। साहब के नौबत को धुनि की धमक धाक वैरिन के कान जानौ हाँक हनुमान को॥ ५६॥

सन्देह लच्छन।

दोहा

बहुत भांति उल्लेख करि एक न ठिक ठहराइ।
अलङ्कार संदेह सो बरनत हैं कविराइ॥ ५७॥

उदाहरन कवित्त।

नील नीरजात रुचि गात कहै रघुनाथ तरनि प्रभात रुचि आनन अलिखि के। पीत झगा पेन्हें पीत दुपटा कमर बाँधे पीरी पाग पर खोंसे पाँखैं टेक सिखि के॥ चाप कर धनुष पुहुप-करी दाहिने में बाग बीच ठाढ़े आज देखत निमिषि के। मन तो बिकानो पै सँदेह ठहरानो सखी मैं न जानी काम है कि राम-सिख रिषि के॥ ५८॥

अपरंच।

मन हंस बसिबे कों रूप को नदी में कैधौं

निकसी पुलिन पाँति काँति हेम लोने की। से-सव सों लरिबे कों जोबन महीप कैधौं कीन्ही मेड़ मोरचे की साधि जीति होने की॥ नैन बसि करिबे कों कहै कवि रघुनाथ चिवली तिया की कैधौं तीन रेख टोने की। कुच भार धरिबे कों देखि अति छाम कटि कैधौं काम बाँधो है बनाइ दाम सोने की॥ ५९॥

अपरंच।

कहै रघुनाथ कैधौं कंचन पटा पैं बैठे केसर बरन दोइ देवता हैं टोने के। तिय हिय घर चतुराई आइबे कों कैधौं मैन धरे कलस सगुन सुभ होने के॥ सुमति नटी के कैधौं बटा फेरिबे के बटा कैधौं कुच छबि की छटा मैं जोग जोने के। जोबन जवाहिर के राखिबे कों लोने कैधौं संपुट बनाये काम सोनो-गोल सोने के॥ ६०॥

अपरंच सवैया।

बागे बने बरही के पखा सिर बेनु बजावत गैयन घेरे। या बिधि सों रघुनाथ कहै छिन

होत जुदे नहि साँझ सबेरे ॥ आँखिन देखिबे कों नहिं पैयतु पैयतु है नितहीं करि नेरे ॥ मोहन सों मन मेरो लग्यो कै लग्यो मन सों मनमोहनु मेरे ॥ ६१ ॥

अपन्हुति लच्छन।

दोहा।

झूठी सो आरोपिये साँचो वस्तु छपाइ।
अलङ्कार मत सुकवि सब कहत अपन्हुति ताहि ॥६२॥

उदाहरन कवित्त।

यह विस्वामित्र है न विधि वर दैके ल्यायो जगत जिताइवे कों हिये प्रेम भारी है। पन मिथिलेस जूको तोयो न पिनाक यह हर सों वयर लीन्हों महा अहंकारी है ॥ एहो रघुनाथ परतीत आवे यातें मोहि मोह्यो मेरो मन जौलों मूरति निहारी है ॥ धाम सील सोभा को ये सीता है न रति बाम राम ऐन ठाढ़े देखो काम देहधारी है ॥ ६३ ॥

अपरंच।

रूप सों रसिकता सों कला की कुसलता

सों जीतत जगत महा मन मद भारिगो। कहै रघुनाथ केती सुन्दर सुघर पर काहू पै न मैन को गुमान गारो गारिगो॥ ऐसो हो अमान बड़े बल को निधान सखी देखि आनि दम्पति सों रारि रचि हारिगो। फैले न पुहुप हार टूटे आक पलिका पै भागत में आपने हथ्यार खोलि डारिगो॥ ६४॥

अपरंच।

चरखी चलात धनु धूम धार धोरवा हैं बीजुरी हवाई उड़ी दाक दुख खरी की। जुगनू चलत टोटा चन्द्रजोति ताल जरे निरझरि चादरि दुसह आगि घरी की॥ जहाँ गिरो इन्द्र-बधू देखि रघुनाथ की सौं फैलि रही पावस हवाईगर करी की। सोकरें न छौंहिं आली नीर की तरंगें ये अनंगें छोड़ी छूटती फुलिंगें फुलझरी की॥ ६५॥

अपरंच सवैया।

आनन की धुनि ए सनिए श्रुति कूकन

कोइल की धँसती हैं। स्वास की चारु प्रकास बयारि न मन्द सुगन्ध हियो मसती हैं॥ दन्तन की दुति ये रघुनाथ कला न कलानिधि की गँसती हैं। देखि भरो रिसि प्यारी तुम्है ए दसौं दिसि आपुस में हँसती हैं॥ ६६॥

अपरंच कवित्त।

बिरह बिभावारी में कहै रघुनाथ मुद्रित ह्वै रह्यो दुःख मन मधुकर दन्द। जोर करि तापैं झकझोरि डार्‌यो अभिलाष पवन प्रकास कै दवन कीन्हो मोह चन्द॥ देखि देखि सखी प्रान-प्यारी जू के उर पर स्वेद के न सीकर बिराजै मोती लौं अमन्द। मित्र को दरसु पाइ पाइ कै अनन्द सोई फूल्यो हिय कमल अमलता को मकरन्द॥ ६७॥

अपरंच सवैया।

जानी पुनीत देवारी कि जामिनि वेदन की मत घोर मिसीं तें। ह्वै के धन्य धरे पन देहैं दिपे अरु मेह भयो बहु भाँतें॥ नंद के

मन्दिर पै रघुनाथ लसैं ए न चारु दियान की पाँतैं । पूजिबे कौं हरि देव-कुमार सखी सुघरै उतरे चहुघाँ तें ॥ ६८ ॥

अपरंच कवित्त।

बारानसी मण्डल की दीन्हो तुम्हें राज आपु ब्रह्मा विष्णु रुद्र भरे भक्ति अहमेव के । रोज की खबरि मँगवायिबे कौं तमौनाथ आपनी तरफ सौं किये हैं नीको टेव के ॥ कहै रघुनाथ बरि-बण्डसिंह महाराज तेई अब जानै जो जनैया यहि भेव के । यह मृगसिरा न नक्षत्र जोति धारें आवै तारे भेष तीन हरकारे तीनो देव के ॥६९॥

हेतु अपन्हुति लच्छन।

दोहा।

सोइ अपन्हुति कीजिये हेतु पूरवक ठानि ।
हेतु अपन्हुति कहत हैं सकल सुकवि पहिचानि ॥७०॥

उदाहरन कवित्त।

लागत किरन जाको करत विकल अङ्ग देखि ताप आँखिन में बसी है समिधि सौं । सूखत बदन मन अति कुँभिलात जात रघनाथ लूवैं

चलैं औठी जेठ रिधि सों ॥ सरद का चांदनी निरखि राम लखन सों बिरह बिदेही के कहत ऐसो विधि सों । ससि तौ न होइ है गरम रवि है न राति जानियतु निकस्यो ज्वलन जलनिधि सों ॥ ७१ ॥

अपरंच सवैया ।

अङ्क नहीं है पयोधि के पंक को औ बसि संक कलंक न जागे । काहों नहीं छिति को परसै अरु भूमी नहीं बड़वागि को पागे ॥ मैं मन बीच किया निहचै रघुनाथ सुनौ सुनतै भ्रम भागे । ईठिन याके डिठौना दियो जेहिं काहू बियोगी कि डीठि न लागे ॥ ७२ ॥

पर्यस्ताऽपन्हुति लच्छन ।

दोहा ।

अर्थ और को लेर के कीजे जहाँ अरोपि ।
परजस्तापन्हुति कहै साँचो बातें गोपि ॥ ७३ ॥

उदाहरन कबित्त ।

नितही कनौड़े रैहैं सौंहैं ऐहैं तौ लजैहैं आगे ते न कहूं जैहैं जानी दाम देना है । जोई

जोई कहौगी करैंगे सोई सोई प्यारे फेरि कौन पैहै नहीं तेवरु तनेनो है ॥ और तो कहां लो कहौं जैसी भावे तैसो कीजो फेरि रघुनाथ सों सुनी की भयो ठेनो है। सपथ तिहारी मैं करौं न झूठी मेरे जान यह तौ न मान प्यारी मान मानि लेनो है ॥ ७४ ॥

भ्रांतापन्हुति लच्छन।

दोहा।

भ्रम संका लखि और की दूरि करै कहि सत्ति।
भ्रांतापन्हुति कहत हैं अलङ्कार सुभ गत्ति ॥ ७५ ॥

उदाहरन कवित्त।

आयो कै अमल कै हिये मैं छायो निरवेद जड़ता को मन्त्र पढ़ि नायो सीस काहू अरि। कै तौ लग्यो प्रेत कै लग्यो है कहूं नेह हेत सूखि रह्यो बदन नमन रहे आंसू भरि ॥ बावरी की ऐसी दसा रावरी देखाई देति रघुनाथ बूझ्यो जब मन मेरो गयो डरि। सखिन की टेरे गरो भरैं हाथ पाँसुरीं दै हरैं कहो सुनी आजु बाँसुरी बजाई हरि ॥ ७६ ॥

अपरंच कवित्त ।

दारुमई मूरति निहारि पुरुसोतम की बूझ्यो भेद अङ्गनि को जेते सुरवर हैं । तिनको सँदेह सब दूरि करिबे कों ऐसे कह्यो कहै रघुनाथ कृपा के जे घर हैं ॥ राजा बरिबगडसिंह जू की जाइ देखो निज ग्यान मैं शरीर भाग्य ताकी बहु कार हैं । मन में हैं पाइ मेरे तन में है मेरो तेज आंखिन मैं सिद्धि मेरे कर सिर पर हैं ॥७७॥

छेकापन्हुति लच्छन ।

दोहा ।

छेकापन्हुति और सों संकि छपावै सांच ।
या बिधि सों कवि कहत हैं लीजो मतिवर बांच ॥७८॥

उदाहरन कवित्त ।

अङ्ग रंग सांवरो सुगन्धन सों लपटानो पीतपट पोषित पराग रुचिवर को । करैं मधुपान मन्द मंजुल करत गान रघुनाथ मिल्यो आनि गली कुंज घर को ॥ देखत बिकानी छबि मोपैं न बखानी जाति कहतही सखी सों त्यों बोली और डर को । भली भई तोहि मिले

कमलनयन प्रात नहीं सखी मैंतो कही बात मधुकर की ॥ ७९ ॥

कैतव अपन्हुति लच्छन ।

दोहा ।

व्याजादिक पद सौं जहां ऽपन्हुति बरनन होइ ।
कैतवपन्हुति कहत हैं सुकवि महा सुखभोइ ॥ ८० ॥

उदाहरन कवित्त ।

बाँचे वेद द्विज नाचैं मेनका घृताची रंभा गाँवैं मंजुघोषा ह्वै मगन सुर साती तूल । सीतल सुगंध मंद त्रिविध समीर डोलैं तरनितनैया के उमड़ि चले दोऊ कूल ॥ कहै रघुनाथ ब्रजनाथ को जनम जानि फूली बेली विटप गगन घन रहे झूल । साथ लै सुरनि सुनासीर सो विमान भारे कैतव सलिल बारै कलप-लता के फूल ॥ ८१ ॥

उत्प्रेक्षा लच्छन ।

दोहा ।

जहँ कीजै संभावना तहँ उत्प्रेक्षा होत ।
वस्तु हेतु फल त्रिविध करि बरनत कवि के गोत ॥८२॥

वस्तुप्रेक्षा दुविध पद उक्त रु एक अनुक्त ।
सिद्धि असिद्धि पद हेतु फल दोउ दोउ युक्त ॥ ८३ ॥

उदाहरन कवित्त ।

वस्तूत्प्रेक्षा उक्त विषय ।

सौंभरी सों खेलत रसिक रसभरी फागु भयो अनुराग राग गावै रीझि पगि पगि । केसरि गुलाल सों लपटि रह्यो रघुनाथ रूप को ठगोरी डारि गोरी डारो ठगि ठगि ॥ ओढ़र के किनकाय लाल के बदन पर निरखि ओन्हाई बीच ऐसे लसैं जगि जगि । मानो फूल्यो बारिज विलोकि कलानिधि आली किरनै चलाई ते लोनाई रही लगि लगि ॥ ८४ ॥

अपरंच सवैया ।

फागु मची बारसाने के बाग सखी समता कहि जाइ न जाकी। रीझि रही लखि हौं रघुनाथ जो देखि रही बहुधा चहुँघा की ॥ बाल गोपाल पैं दौरी गुलाल लै ऐसी लसी भरी रंग प्रभा की । चारु तमाल के संगम को भई जंगम बेलि मनो कँलगा की ॥ ८५ ॥

अपरंच कवित्त।

आजु एक ललना अन्हात में निहारी लाल पीन पयोधर बीन मानौ छीन लङ्क है। जमुना के जल बीच कण्ठ के प्रमान पैठि पोंछे जो लिलार लाग्यो मृगमद अङ्क है॥ मुख अरु पानि को परस भये रघुनाथ आनि ऐसी लसी सोभा परम असंक है। बारिज को नातो मानि धोल करिवे कों मानौ कौल कलानिधि में को धोवत कलंक है॥ ८६॥

अपरंच सवैया।

देखि दरीची ह्वै प्यारी को रूप समै रघुनाथ कों सोंहरे ए हैं। पीठि दिये पग पानि समेटि लगो उर सों इमि सोवत है हैं॥ ऐसे रहे लसि नील निचोल सों कंचन से उघरे अंग जो हैं। कौल के फूलन की रचि माल सनाल गोपाल मनौ पहिरे हैं॥ ८७॥

अपरंच।

देखि री देखि या ग्वारि गँवार की नेकु नहीं थिरता गहतो हैं। आनँद सों रघुनाथ पगीं पगीं

रंगनि सों फिरतै रहती हैं ॥ कोर सों कोर तयोना को छु करि ऐसो बड़ो छवि कों लहती हैं । जीवन चाइबे को महिमा अँखियां मनो कानन सों कहती हैं ॥ ८८ ॥

अपरंच कवित्त ।

गवनि गयंद गूजरेटी गरू गुनन की गली मो मिलो ज्यों देखिबे की तरसानो है । कहै रघुनाथ वाके मुख की मरीचो आगे चिलक जोन्हाई की न चन्द सरसानो है ॥ चारु कुच कलित ललित रोमराजी राजी साजी कवि समता विनोद बरसानो है । उर छवि-सागर में सिन्धुर धस्यो है मैन बूड़ि गयो धर कार कुंभ खुलो मानो है ॥ ८९ ॥

अपरंच कवित्त ।

भुजदण्ड बली बरिवण्डसिंह महाराज वैरी बरबिक्रम की काटी फौज पल में। कहै रघुनाथ कवि कहिये कहां लों सोभा जेसो कछु समर की भई दलमल मे ॥ फिरत कबन्ध मध्य बीरन

की जुत्थ जुत्थ यों लसैं विहङ्ग फैले सोनित की थल मै । लपटैं समेत लह लह लह लहकत मानो परे दहकत काठ दवानल मै ॥ ६० ॥

वस्तूत्प्रेक्षा अनुक्त विषय यथा सवैया ।

सिगरे दिन वारि पहार समेत तची अति दुसह पूषन सों । भई मैलो महा रघुनाथ कहै वह कारि बयारि के रूखन सों ॥ पल डीठि लगाइ न जाइ लखो ऐसो भूरि रही भरि दूखन सों । सोइ लीपत सी ससि आवतु है दिसि भीजी पियूष मयूषन सों ॥ ६१ ॥

उदाहरन कवित्त ।

देतु है न कल एक पल एहो रघुनाथ पौन पछिवाँहो बहै अङ्गनि छिलत सो । पानी की कहानी सी तौ जाति न बखानो कछू नेक परसत पानि पाइ पघिलत सो ॥ कैसे कै हिमन्त अन्त सिसिर की ह्वै है पल पट कै टरत पेट पीठि सों मिलत सो । जब सों उयो है आजु तब सों है देखि सखी तरनि को तेज सीत आवत गिलत सो ॥ ६२ ॥

अपरंच सवैया ।

खेलि कै फागु फिरो जब सौं तब सौं दृग देखिये मैर मढ्यो सो । आवत है मुख जो सो बके कछु खाहि न पीवहि भूत चढ्यो सो ॥ ऐसी दसा सब की रघुनाथ रह्यो तपि के अँग आगि डढ्यो सो । डारि गयो नँदलाल सखी ब्रज बाल पैं मानो गुलाल पढ्यो सो ॥ ८३ ॥

अपरंच कवित्त ।

राति के बसत एक साथ सदा कुंजधाम काम की कला के भांति भांति मोदमये हैं । इतनो वियोग को सँयोग होत रघुनाथ भोरही बिदा ह्वै आय आपु घर गये हैं ॥ प्रेम को नि-काई को न जाति कछू गाई रीति सांझ परे फेरि जब आइ मैं मिलए हैं । बिहँसि बिहँसि दोऊ ऐसे मिलैं परसन बरसन बीते मानो दरसन भये हैं ॥ ८४ ॥

हेतूत्प्रेक्षा सिद्धविषया यथा सवैया ।

इक गोप लली लिये सङ्ग अली दस बीस

अन्हैबे को आवति हैं । रघुनाथ बिलोकतही र-
हिये इतनो अँखियांनि कौं भावति हैं ॥ छबि
वाँको कहां लौं कहौं सिगिरौ तन में तरुनाई
जो छावति हैं । रंग गोरो भयो इतनो झलकै
अंग में मनो केसरि लावति है ॥ ६५ ॥

अपरंच सवैया ।

जोवन कौ लखि सम्पति प्यारी के आपु
सदा हित ह्वै रहिबे कौं । प्रेम को नेम निबाहि
लगे बुधि के बल सौं सुख कै लहिबे कौं ॥ प्यारे
के औगुन औगुन सौं रघुनाथ सुनो जो हियो
नहिबे कौं । बाढ़ि परे तें अमान ह्वै लोचन कान
लगे हैं मनो कहिबे कौं ॥ ६६ ॥

हेतूत्प्रेक्षा असिद्धविषया यथा कवित्त ।

तेरे कुच पेखि कै बराबरी कौं इन्द्र कीन्हें
अचल अचला पर काटि कै सरनि सौं । तेरे
नैन निरखि समानता कौं मैन बान सान पर
धरवाये हैं कारीगरनि सौं ॥ तेरो मुख सुन्दर
बिलोकि समता कौं ससि कहै रघुनाथ रवि पो-

खत करनि सों। घिरे बार बारिद निहारि तुलिबे कों मानो देखि धार धुरवा की लाई है धरनि सों॥ ८७॥

फलोत्प्रेक्षा असिद्धविषया यथा सवैया।

है न समै यह हसिबे को निजु मैं रघुनाथ की सौंह सुनाई। भीतर बैठो कहा करतो होव एती कहो मैं गहें निठुराई॥ बाहिर आइ कै देखि बलाइ ल्यों आजु के मेघनि जो छबि पाई। बारि को भार सँभारिबे कों मनो धार धरा धुरवा की लगाई॥ ८८॥

फलोत्प्रेक्षा सिद्धविषया यथा सवैया।

कातिक माह में तारे की छाह में न्हैबे की जो चित चोप ठई है। भोजन भूषन वस्त्र को दान भी जो सनमान कै भूमि दई है॥ गौरो गिरीसहि पूजहिं जो रघुनाथ मैं सो सब जानि लई है। तोही सी ह्वै कों मानो बलाइ ल्यों सौतिन के उर साध भई है॥ ८९॥

अपन्हव लच्छन।

दोहा।

जहँ उत्प्रेच्छा सो मिलो आपु अपन्हुति होत।
ताहि अपन्हव कहत हैं अलङ्कार कवि गोत ॥ १०० ॥

उदाहरण सवैया।

खंजन को अरु मीनन को अरु अंबुज को जिय जीति बसे तें। काम के बानन को मृग कोऊ औ दुरेफन को छबि देखि हँसे तें ॥ ऐसे निसीगु नए रघुनाथ न अंजन अंजन रेख लसे तें। तेरे बिलोचन यातें भटू भये तीखे तखोननिळूँ निकसे तें ॥ १०१ ॥

अपरंच सवैया।

वेऊ तो आई हैं व्याहि सबै उन हूँ को तो है इक एही ठिकानो। कैसे कहौं तुम काहु के आइ न है कहिबे यह लायक जानो ॥ आपुस में मति द्वेष करौ रघुनाथ की सौंह कही उर आनो। सौतिन को नहिं भावतो है प्रिय है पिय भावतो तेरोइ मानो ॥ १०२

रूपकातिशयोक्ति लच्छन।

दोहा।

जहँ निगरन उपमेय को बिलसि करै उपमान।
रूपकातिशय उक्ति सो जानत सकल सुजान॥ १०३॥

उदाहरन सवैया।

पंकज पैं कदली कदली पर केहरि को मधि भाग लग्यो है। केहरि के मधि भाग के ऊपर स्याम लता गिरि तापै खग्यो है॥ है गिरि पैं रघुनाथ कपोत कपोत पैं चन्द्रमा देखि पग्यो है। चन्द्रमा में छबि देत हैं मीन औ मीन में तें सराशीत तग्यो है॥ १०४॥

अपरंच सवैया।

देखि ये देखि सखी इहिं ओर कहा उत हेरि रही दृग दीन्हे। कौतुक ऐसो न फेरि कहूं अबहूं मिलिहै अचका बिनु चीन्हे॥ जंगम चंपक बेलि पैं बैठि कहै रघुनाथ बड़ो छबि कीन्हे। आवत आपु खिलावत गोद में खंजन है निसि रंजन लीन्हे॥ १०५॥

अपरंच सवैया।

खेलत सिकार गयो ऊपर पहार चढ़ि देस

लूट्यो धाइ कै अगोरी नगर को। पर्यो सोर चारों ओर कहै कवि रघुनाथ निकस्यो गोहार रजपूत घर घर को॥ भूप बरिवण्ड की बहादुरी कहां लों कहौं प्रगट प्रभाव देख्यो भागे भुज- बर को। मारि कै चंदेले अलवेले महाबाहु कीन्हो राहुमई केतुमई खेत बड़हर को॥१०६॥

संबन्धातिशयोक्ति लच्छन।

दोहा।

जहँ अजोग में जोग है है अजोग जहँ जोग।
संबन्धातिशयोक्ति सो दुविध कहत कवि लोग॥१०७॥

अजोग में जोग यथा उदाहरन कवित्त।

जटित जवाहिर सों दोहरे देवानखाने कज्जा छाति आँगन हउज सर फेरे के। कागी औ केवार देवदारु के लगाए लखौ लह्यो है सुदामा फल हरिपद हेरे के॥ पल में महल विश्वकरमै तयार कीन्हे कहै रघुनाथ कैयो जोजन के घेरे के। अतिहीं बुलन्द जहां चन्द में तें अमी चारु चूसत चकोर बैठे ऊपर मुड़ेरे के॥ १०८॥

अपरंच कवित्त।

आजु बरसाने गई राधिके बिलोकिबे कों

गाउँ बीच बैर संबकी कै मुख लहिये। सोचति डेरानी माय बिललानी फिरै धाय रघुनाथ सखी कहैं हाय ऐसा चहिये ॥ लिखे नहिं जारे देखि जवत परेखि मन उनकी जो देहँ दसा थोरोहू सो कहिये। आखर गरम बरैं लागै स्वास बाय कहूं लीभि जरि जाय फेरि बोलिबे ते रहिये ॥

अपरंच कवित्त।

जौन लिखि दई तुम अतिहीं सनेहमई गई लै रसिक तौन जहां प्रेम रातो हो। सौंहिं ठाढ़ी भई मोहिं देखत बुलाइ लई बूझि कै कुसल लई सुखद सोहातो हो ॥ रघुनाथ दसा कछू मोपै न बखानो जातो ऐसो कछू वास हाल बिरह सो तातो हो। छूवतहीं बरिउठो मैं तो देखि डरि उठी समुझो न कातो वह पातो हो कि बातो हो ॥ ११० ॥

अपरंच सवैया।

आपुन के बिछुरे मनमोहन बीती अबे घरी एक की है हे। ऐसो दसा इतने में भई

रघुनाथ सुने भय ते सन ह्वै है। गोपिन के अँसु-
आनि को सागर बाढ़त जात मनो नभ छ्वै है।
बात कहा कहिये ब्रज की अन-बूड़ोई ह्वै है कि
बूड़त ह्वै है ॥ १११ ॥

जोग में अजोग यथा सवैया।

देखि गति चासन तें सासन न मानै सखी
कहिबे कों चहत कहत गरो भरि जाय। कौन
भाँति उनको सँदेसो आवै रघुनाथ आइबे को
मोपै न उपाय कछू करि जाय॥ बिरह-बिथा की
बात लिख्यो जब चाहै तब ऐसी दसा होति
आँच आखर में भरि जाय। हरि जाय चेत चित
सूखि स्याही झरि जाय बरि जाय कागद कलम-
डंक जरि जाय ॥ ११२ ॥

अपरंच सवैया।

तिन सों कहिये यह बात बलाइ ल्यों गो-
पन की नहिं जानत जो। हम सों इतनो छल
हेत कहा हम साथिनि हैं इहाँ बाहिरी को॥
रघुनाथ जो है दसा सो सुनिये कछू है न छपी

जग जानत सो । जब सौं मिली सादर तू उन सौं तब सौं घटि व्याहो को आदर मो ॥११३॥

अपरंच सवैया ।

सागर-जात सराहत है श्रुति सूर हितू हित के सरसावै ॥ श्री को सहोदर सीरो सुभाव सदा रघुनाथ कहै कवि गावै ॥ साथ सभा सुर की लहिये अरु अंसुनि औनि प्रकासहि छावै। ऐसो अज ससि प्यारे तऊ तुअ आनन आगे न आदर पावै ॥ ११४

जोगा-जोग लच्छन ।

दोहा ।

जिते जोग में होत है देखो आइ अजोग ।
होत जोग फिरि आइ तेहि कहियतु जोगा-जोग ॥११५॥

उदाहरन सवैया ।

औधि के आस गोपाल के पास चली बन कों निसि जाम गये है । एते में मेघ अकास मैं आइ के छाई दिसानि अँधेरी लई च्वै ॥ पाइबे को पथ ऐसो समै रघुनाथ की सौंह सुनौ सुख सी ह्वै । अंग के संग अभूषन-जाल सों आपुहि बाल मसाल गई ह्वै ॥ ११६ ॥

अक्रमातिशयोक्ति अंलकार ।

दोहा ।

कारज कारण संग जहँ बरनत हैं कविराज ।
अक्रमातिशयउक्ति सो सकल रसनि को साज ॥ ११७ ॥

उदाहरण सवैया ।

रावण आदिक जेते महीप बोलाइ इते के अनेक निहोरे । देख री कैसे लजाने सबै लखि नैन सों नैन न आत हैं जोरे ॥ ऐसी गुमान गुमानिन के रघुनाथ बिलम्ब लगी नहिं मोरे । लै गुरु-सासन श्रीमिथिलेस को सोच सरासन साथहि तोरे ॥ ११८ ॥

अपरंच कवित्त ।

कृष्णन करोड़ मेघमाला आई ब्रज पर बरसे मुसर-धार रोप्यो महा प्रलै काल । बूड़ि गये थल जल जहाँ तहाँ फैलि उठ्यो जीव जंतु जहाँ त्यों ही सकल भए बेहाल ॥ रघनाथ देखि दसा दया आई इतने में सबही के देखत मे रच्यो एक ऐसो ख्याल ॥ गोपन को सनमान मघवा को अपमान एक साथ कीन्हें गिर धरि गिरधर लाल ॥ ११९ ॥

अपकातिशयोक्ति लच्छन ।

दोहा ।

कारन के परसंग में जहँ कारज की सिद्धि ।
सो अपकातिशयोक्ति है बरनत हैं बर बुद्धि ॥ १२० ॥

उदाहरन कवित्त ।

हरष हेराए आनि निकट बसाए दुःख कौने धौं सिखाए ऐसे मन्त्र अनरथ के । कहै रघुनाथ राज पदवी के समै कैसी हित् ह्वै अकाज कीन्हों बैरी लौं अकाथ के ॥ केती पाप पापिनि कमायो देखो हाय हाय काढि जैहैं प्रान ए कढ़त बोल पथ के । राम को बिपिन-बास केकई के कहैं देखो पीरे भए सूखि गए गात दसरथ के ॥ १२१ ॥

अपरंच कवित्त ।

एक दिन दरसन हित कर दमेस्वर महा वीर बरिवण्ड आपुन पधारेव । लगे तहाँ कपाट दृढ़ लखि सो सावन्तन बल कल करि खोलत पै सब हारेव ॥ कौतुक निरखि आप करि आप जीव महँ मन महँ भक्ति भगति बिसतारेव । खुले

आपु आपुहिं तहां वे पट मन्दिर के खुले तब अम्बु
जय जय धिधि भारेव ॥ १२२ ॥

अत्यन्तातिशयोक्ति लच्छन।

दोहा।

जहां व्यतिक्रम कीजिये पूरब पर गहि रीति।
अत्यन्तातिशयोक्ति सो बरनत कवि यहि रीति॥१२३॥

उदाहरन कवित्त।

धसत तरङ्गिनी में तीरहीं तरल आइ ग्रस्यो ग्राह पाइ खैंचि पानी बीच तरज्यो। करभी कलभ करैं कलपना कूल ठाढे कहा भयो कहा करुना के सङ्ग लरज्यो॥ कठिन समै विचारि साहस सों गयो हारि हरि-पग ध्यान रघुनाथ ज्योंहीं सरज्यो॥ असरन-सरन बिरद को परन देखो पहिले गरज गई पाछे गज गरज्यो॥१२४॥

अथ भेदकातिशयोक्ति लच्छन।

दोहा।

भेदकातिशय उक्ति सो जाको ऐसी रीति।
औरे औरे कहत हैं जाको गुन करि प्रीति॥१२५॥

उदाहरन कवित।

पीठ पै न कूबर को बाकि सुनो टोना बाँधि

बकुचा बनाइ सौंप्यो याती ही मयन की । चन्दन की मिसि करि सोई लिखि सीस लायो प्रगट निहारि चारु मूरति चयन की ॥ एहो रघुनाथ परभाव वाको उन्है घेर्यो अब कहा कीजे सोच पाछिले बयन की । प्रीति कछू औरै भई रीति कछू औरै भई नीति कछू औरै भई राजिव-नयन की ॥ १२६ ॥

अपरंच कवित्त ।

अब न रही है नेक एहो कवि रघुनाथ आए तुम देखि जौन वाकी वहै गौरई । जो-बन के आवत उलहि गई एकै बार बालक बयस की बसी ही जौन बौरई ॥ औरै कछू मति गति औरै कछू रति अति औरै कछू मन में मिली है आइ कौरई । औरै कछू चलनि चितौनि कछू औरै भई औरै कछू अङ्ग रङ्ग रूप कछू औ-रई ॥ १२७ ॥

तुल्ययोगिता लच्छन ।

दोहा ।

बर्न्य अबर्न्य को धर्म इक के औरन को होर ।
तुल्ययोगिता दुविध सो बरनत हैं बुध लोइ ॥ १२८ ॥

अन्यांअन्य को एक धर्म यथा सवैया ।

गेहनि गेहनि गोपनि के बहु बाजत आनँद बीच बधाए । देखतही बनि आवतु है रघुनाथ सखी गुन जात न गाए ॥ आज लों काहू अ-सोमति कैसो द्विगोसुन को तिय पूत न जाए । जाके भये तिहुँ लोक के आजु धनी निधनौ दोउ मागन आए ॥ १२९ ॥

अपरंच सवैया ।

रस पी कै सरोजन ऊपर बैठि दुरेफ रचैं बहु सोरन कों । निज काम की सिद्धि बिचारि बटोही चलैं उठि कै अहुँभोरन कों ॥ सब होत सुखी रघुनाथ कहै जग बीच जहां तक जोरन कों । एक सूर उदै कै भयें दुख होत है चोरन और चकोरन कों ॥ १३० ॥

अन्यं तें और को एक धर्म यथा सवैया ।

बाम बनावत मोति गई वय पै नाहिं धीर धर्‌यो जियराई । तौहि बनावत आनि बसी बिधि के तन में मन मैं सियराई ॥ जो बन आ-

वत जाकी सरीरमें है रघुनाथ दुती लियराई।
तेरी सों देखत जाके परी लखि केसरि कंचन
की पियराई ॥ १२१ ॥

अपरंच कवित्त ।

बलि गई लाल अलि सीजे बूजिये निहाल
भाई हौं सेवाड़ के अतन बहु बंक सों । बनि
आवै देखतही बानिक बिसाल बाल जाहू ना-
सराही मेक मेरी मति रंक सों । आपनी करन
करतार गुन भरी कहे रघुनाथ करो ऐसी दूखन
के संक सों ॥ जाकी मुख-सुखमा की उपमा
सों न्यारे भए जड़ता सों कमल कलानिधि
कलङ्क सों ॥ १२२ ॥

अपर तुल्ययोगिता लच्छन ।

दोहा ।

हित अनहित के हृत्ति में एक धर्म जहँ होइ ।
तुल्ययोगिता अपर यह कहत सुकवि सुख मोद ॥१२३॥

उदाहरन सवैया ।

बोलनि बीच अमी जिहिं के रघुनाथ कहे
प्रगटे परे पीछो । आनन की दुति ऐसी लसै

जनु छौनि कृपाकर को छबि लीन्ही ॥ और कहां लौ कहौं गुन गौरि के गौने हुती प्रभुता प्रभु कीन्ही । सौति के मानहिं पीके गुमानहिं पावत आपु पराजय दीन्ही ॥ १३४ ॥

अपरंच कवित्त ।

जासौं बैर तासौं बैर जासौं प्रीति तासौं प्रीति करनी उचित है विदित सब जन कौं । एक ऐसी चलन चलावनो सो भली नाहिं यामै लागि जात है कलङ्क चतुरन कौं ॥ मेरी कही बात जाकौ जो न परतीत आवै एहो कवि रघुनाथ रावरे के मन कौं । प्रगट निहारि यह कोजै हो मुरारि रीति देत वारि बारिद है प्यासे चातकन कौं ॥ १३५ ॥

अन्य तुल्ययोगिता लच्छन ।

दोहा ।

जहँ गुन की उत्कृष्टता सोई बचन समान ।
तुल्ययोगिता अन्य सो बरनत सकल सुजान ॥ १११ ॥

उदाहरन सवैया ।

सौरभ में परिपूरन केतकी मालती मौल-

सिरा घो तुहू है। गोरता में कल कंचन केसरि औौर तुहूँ हैं मनो सबहू है ॥ बानक में रघुनाथ कहै रति रम्भा घो तुहूँ है देखी महूँ है । ऐसी रची विधि भाँवतो तोहि न तेरी छुटी मरजाद कहूँ है ॥ १३७ ॥

अपरंच सवैया ।

एक घरी न जुदी ह्वै सकै रघुनाथ घिरी गुरु लोग के फन्द सों । आई सो आपने गेह लिवाइ तिहारे लिये बस कै बहु छन्द सों ॥ बैठे कहा इत कीजे बलाइ ल्यों वेगि उतै चलि भीओो अनंद सों । प्यारी को आनन पूनो को चन्द बिराजत दोज प्रकास अमन्द सों ॥१३८॥

अपरंच सवैया ।

तोहि न रूसने जोग बलाइ ल्यों वैर करें मति काहू के लागहि । आपुनपौ पहिले तू बिचारि लै को रघुनाथ कहा उर पागहि ॥ तो सौ बड़ बड़भागिनि को जिहि की सब सौति लिये अनुरागहि । देखि सरूप सनेह सराहतीं प्यारे के भागहि तेरे सोहागहि ॥ १३९ ॥

मिश्रतुल्ययोगिता लच्छन ।

दोहा ।

गुन ते वर्ण्य अवर्ण्य को जहां नाउँ बिख्यात ।
तुल्ययोगिता मिश्र सो कहत सुमति अवदात ॥१४०॥

उदाहरन सवैया ।

देव कहा औ अदेव कहा औ कहा नरदेव कहावत सोऊ । जोगी कहा औ जती हू कहा औ व्रती हू कहा बन में बसे जोऊ ॥ तीनि हूँ लोकन में इन सों रघुनाथ रह्यो बिनु हारे न कोऊ । बान सों मैन कटाच्छ सों नैन सी ए जग-जैन बिख्यात हैं दोऊ ॥ १४१ ॥

दीपक लच्छन ।

दोहा ।

वर्ण्य अवर्ण्यन को जहां एकै धर्म उदोत ।
अलङ्कार दीपक तहां बरनत कवि के गोत ॥ १४२ ॥

अपरंच सवैया ।

आई है साँझी को तोरनि फूल तोरावति ठाढ़ी सखी छबिरास तें । बेगि उतै चलि देखौ बलाइ ल्यौं हे रघुनाथ लख्यो मन जास तें ॥ भौंरन की लगि भीर रही अरु भीर चकोरन की

जेहिँ पास तें भीतर बाग के सोभित होति है मालती बास तें प्यारी प्रकास तें ॥ १४३ ॥

दोहा ।

दीपक जो सो तीन बिधि इक है पद आवृत्ति ।
अरथावृत्ति सु एक है और पदार्थावृत्ति ॥१४४॥

पदावृत्ति दीपक लच्छन ।

दोहा ।

अर्थ दोइ पद एक की बहु आवृति जहँ होइ ।
पदावृत्त दीपक तहां बरनत कवि सुख भोइ ॥१४५॥

उदाहरन सवैया ।

चहुँ ओरन तें गन मोरन के ढिग आइ के नाचन लागत हैं। तजि मालती कुंज मधुब्रत पुंज से चौंर भये सुख पागत हैं ॥ रघुनाथ जहां तक गोधन हैं सँग ते चरिबो परित्यागत हैं । सुर साँवरे सारँग रागत हैं बन में सब सारँग रागत हैं ॥ १४६ ॥

अर्थावृत्ति दीपक लच्छन ।

दोहा ।

अर्थावृति दीपक जहां अलङ्कार में होइ ।
सुकबि तहांबरनत करत एक अर्थ पद दोय ॥१४७॥

उदाहरन सवैया।

बातैं बसीठिनि सों सुनि कै मिलिबे को भए अभिलाषित दोऊ। भागन भेंट गली में अचानक मासों गोपाल सों ह्वै गई सोऊ॥ चाह्यो कह्यो कछु आपुस में रघुनाथ निहारि नजीक न कोऊ। एते में आइ कै लाज भरी सखी मैं रही चाहि चितै रहे ओऊ॥ १४८॥

अपरंच सवैया।

तोहि बसंत के आवतहों मिलिहैं इतनो कहि राखिहि तू जे। सो अब बूझति हौं तुम सों कछू बूझे तें मेरे उदास न हूजे॥ काहे तें आए नहीं रघुनाथ ए आइ क औध के बासर पूजे। देखु मधुब्रत गूंजे चहूं दिसि कोइल बोलो कपोतऊ कूजे॥ १४९॥

पदार्थावृत्ति दीपक लच्छन।

दोहा।

तहां पदार्थावृत्ति को कबि-जन करत बखान।
जहां एक पद अर्थ इक प्रगट परत पहिचान॥ १५०॥

उदाहरन कवित्त ।

देव को समूह सब सुखी भयो आजुहीतें दुखी भयो दानव को बंस महारिस को । आजु तें बड़ाई जोग मानुष को बेस भयो भयो धराधरिबे को सेस देस हिस को ॥ कुंवर कन्हैया को जनम भयो रघुनाथ आजु तीनो लोक भयो प्रेम नेम चिसको । गोपन को गोत भयो आजु तें अखण्डल सो भयो ब्रजमण्डल अभिप दसों दिस को ॥ १५१

अपरंच सवैया ।

बातें बनाइ बनाइ कहौ कहिये रघुनाथ को सौंह लरैगी । और न काई बची ब्रज में एक तूंही है नेम निबाह करैगी ॥ आये भये दिन चारि इते अबहीं सबहीं को कुनाउँ धरैगी । तान भटू मनमोहन को वह कान परैगी तौ जानि परैगी ॥ १५२ ॥

अपरंच कवित्त ।

संपति के आखर ते पाइ में लिखे हैं लिखे

भुवभार थांभिबे के भुजनि बिसाल में। हिय में लिखे हैं हरि मूरति बसाइबे कौ हरि-नाम आखर सो रसना रसाल में॥ आंखिन में आखर लिखे हैं कहै रघुनाथ राखिबे को दृष्टि सबही के प्रतिपाल में। सकल दिसान बस करिबे के आखर ते भूप बरिबण्ड के बिधाता लिखे भाल में॥ १५३॥

प्रतिवस्तूपमा लच्छन।

दोहा।

इक समान बाक्यर्थ को बरनन जहँ पैं होत।
प्रतिवस्तु उपमा तहां बरनत कबि के गोत॥ १५४॥

उदाहरन सवैया।

आपने हाथ करे करतार भरे अति रूप तमासे के काजैं। तीनिहुं लोकनि में भए पूज्य महा महिमा सों भरे सुखमा जैं॥ दोऊ बराबर ए रघुनाथ सदा अपनो अपनो जस साजैं। रंग सों बारिज छाजैं भरे-छबि प्यारी के नैन कटाच्छ सों राजैं॥ १५५॥

दृष्टान्तालङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

जहां बिम्ब प्रतिबिम्ब को बरनत सो दृष्टान्त ।
अलङ्कार में सुकवि मत भाषत हैं मति कान्त ॥ १५५ ॥

उदाहरन सवैया ।

नायक आजु तिहूं पुर मैं उनको न बरोबर सुन्दर आन है । तेरो बरोबर को युवती रघुनाथ की सौंह सुनी नहिँ कान है ॥ आजु तुम्हे मिलिबे कों बलाय ल्यों याते कहूं यह बूझो निदान है । कौबे कों बेपरमान सनेह तुंही गुनमान वोई बुधिमान है ॥ १५६ ॥

द्वितीय दृष्टान्त लच्छन ।

दोहा ।

जौलों यह वाक्यर्थ को तौलों यह प्रतिबिम्ब ।
एक रीति दृष्टान्त यह बरनत कवि बिनुलम्ब ॥ १५७ ॥

उदाहरन कबित्त ।

तौलों नीको देह को न गुन बूझि परत है जौलों न सँजोग होत आइ कोऊ रोग को । जौलों कोऊ समै पाय घरै न बिपति आय तौलों ध्यान आवत न कीन्हे सुख-भोग को ॥ जौलों न

मिलत मनु औसर को रघुनाथ तौलौं न मिलत अंत भले बुरे लोग को। जौलौं न बियोग होत कहत हैं ग्यानी सब सुनि राखौ तौलौं स्वाद मिलै न सँजोग को॥ १५८॥

निदर्शना लच्छन।

दोहा।

बाक्य अर्थ के सदृस को जहां सु ऐक्यारोप।
बरनत तहां निदर्शना सुकवि सकल भ्रमलोप॥१५९॥

उदाहरन सवैया।

जोग कियो जप जग्य कियो सब काशिहिँ आदिक तीरथ कीन्हे। इच्छित भोजन भूखन का दिये बिप्रन को छिति कंचन दीन्हे॥ आतमा एक अनेकनि को अपनो रघुनाथ भली बिधि चीन्हे। सो सब कामहि सिद्धि करै थिर ह्वै पल जो हरि नामहि लीन्हे॥ १६०॥

अपरंच कबित्त।

उनके लखि हाव अनेकनि भाव सु प्रेम सुभावन के जुत को। मन भूलि कै तू धरियो कबहूं मति आसरो राखि कछू उतको॥ यह

आगे रहौ रघुनाथ कहै पद पंकज कू नँद के सुत को। हित सों बस कीबो सो बारबधू कर सों गहि लीबो सो मारुत को॥ १६१॥

अपरंच सवैया।

लाखन थोरे भए तौ कहा औ कहा भयो जो भये लाखन हाथी। हे रघुनाथ सुनौ हो कहा भयो तेज की तेज दसौं दिसि माथी॥ कंचन दाम सों धाम भयो तो कहा भयो नापि करोरिन पाथी। जो न कियो अपनो अनपाय कै श्रीरघुनायक लायक साथी॥ १६२॥

द्वितीय निदर्शना लच्छन।

दोहा।

छत्ति पदारथ की जहां बरनत हैं कवि एक।
देखो तहां निदर्शना दूजो सहित बिबेक॥ १६३॥

उदाहरण सवैया।

काहू के कंजन खंजन की रघुनाथ धरे रुचि राम बिहारे। काहू के मीन मृगैनन के गुन रूप धरे रँग के बलि हारे॥ जेतिक हैं जग मैंजुवती तिनके ढँग को एहि भांति निहारे।

तीछन बानन की धरै बान सो ईछन ए सुखहा न तिहारे ॥ १६४ ॥

अपरंच निदर्शना लच्छन।

दोहा।

तासों अपर निदर्शना कहत कबिन के गोन।
जहां असदसद अर्थ को बोध क्रिया सों होत ॥ १६५ ॥

असदर्थ उदाहरन सवैया।

तीछन ईछन बेधत कान बुझावत हैं इतनो सुनिये ते। दीजिये दुःख परोसिनि कों रघुनाथ लखि रचना प्रभु कौ ये ॥ जोबन भार भरे तिय के कुच देखतही ह्वै तनेन रहै जे। संपति पाइ कै हूजै कठोर सिखावन है लघु लोगन कों ये ॥

सदर्थ उदाहरन सवैया।

दारुन दुर्जन ताको सहोदर हैं रघुनाथ बिभीषन देवा। एते पै आपु महा बलपूर महारनसूर फतूह को लेवा ॥ लङ्क दई तेहि कों रघुनाथ ने आनि मिले तजि कै अहमेवा। देखो जनावत राजन कों काल जो फल होत बड़ेन की सेवा ॥ १३७ ॥

व्यतिरेक लच्छन ।

दोहा ।

उपमा ते उपमेय में जहां अधिकई होत ।
अलङ्कार बितरेक सो बरनत हैं कवि गोत ॥ १६८ ॥

उदाहरन सवैया ।

उच्चता देखि कठोरता देखि के देखि कै बर्तुलता अति नीके । श्रीफल को कुच को उपमा सिगरे कवि देत लहे हित जी के ॥ सो यह सांच अहा रघुनाथ जो सोभित होत गहें सम सोकि । एतिक जानि परे अधिकी सुख होत निदान छुयें कुच ही के ॥ १६९ ॥

सहोक्ति लच्छन ।

दोहा ।

सतमन रंजन सुकवि जहँ बरनत हैं सतभाव ।
तहँ सहोक्ति जानत चतुर अलङ्कार जुत चाव ॥१७०॥

उदाहरन कवित्त ।

सुरपति आदि दे के दसौं दिगपालन कों मारि बस कीन्हे कै बिचार बड़े जस को । कहै रघुनाथ काहू भांति काहू सों न नयो नयो नित प्रगठ्यो प्रवाह को परस को ॥ रह्यो ऐसो सठ पै

न हठ करि सक्यो नेक काढ़ि दीन्हें घर कलेवर बरकस को। महा रनधीर रघुबीर की सरन आपु बानहीं के साथ आयो प्रान सीस दस को॥ १७१॥

अपरंच सवैया।

रूप अनूप लख्यो कितनो रघुनाथ कहै ब्रज की बनिता को। पै नहिं ऐसो पस्यो कोऊ डीठि बन्यो एहि भांतिन तें सिर पा को॥ और कहौं सो सुनौ चित दै एहि भांतिन को निरख्यो गुन वाको। जात दिगंतन लौं चलि कै मिलि साथ समीर के सौरभ जाको॥ १७२॥

बिनोक्ति लच्छन।

दोहा।

बर्ननीय बरनत जहां कछू वस्तु बिनु होन।
तासौं कहत बिनोक्ति सब अलङ्कार परबीन॥ १७३॥

उदाहरन सवैया।

मल्ल को सो बल पूरन कै कै करी चिकनौ करि रोज सनेही। चौमर चन्दन चारु दुकूल सों भूषित भूरि करी सुख-गेही॥ कैयो प्रकार

को भोजन दै रघुनाथ करी गुर स्वच्छम जी हौ। एक बिना हरि नाम जपे सब भांतिन सों बिनु काम की देही ॥ १७४ ॥

अपरंच सवैया ।

देखि जिन्हे हँसि धावत हे लरिकापन धूरि के बीच बकैयाँ । लै जिन्हे संग चरावत हे रघुनाथ सयाने भये चहुंघैयाँ ॥ कीन्हे बली बहुभांतिन तें जिनको निति दूध पियाइ के मैयाँ । पैयाँ परौं इतनी कहियो ते दुखी हैं गोपाल तुम्हे बिनु गैयाँ ॥ १७५ ॥

अपरंच सवैया ।

कछु देखि कै लच्छन छोटो बड़ो सम बात चलें कहि आवतु है । इतने के लिये करिये इतनी रिस को सुनि कै सुख पावतु है ॥ कहती हौ कि चांदनी देखि रहैं जो कही रघुनाथ बोलावतु है । तुमहीं करो न्याव लखे बिनु तोहिं लला को कलानिधि भावतु है ॥

द्वितीय बिनोक्ति लच्छन।

दोहा।

बर्ननीय बरनत जहां काहू बिन रमनीय।
दूजो भेद बिनोक्ति को कहत सुकवि कमनीय ॥१७७॥

उदाहरन कबित्त।

दामिनि को ऐसो देखि देह को दमक ग्रौर अमल अपूरब जो सौरभ लसतु है। पावस की रजनी अँधेरी में लखो न जाउ ऐसो जो अँदेसो तेरे मन में बसतु है॥ सोऽबकरि दूरि सुख पूरि चलि प्यारे पास रघुनाथ मेरी कही कीजै न असतु है। रूपनिधि आनन की जोति सों मिलाई जोति देखि आई बिधु बिनु बारिद ल-सतु है॥ १७८॥

समासोक्ति लच्छन।

दोहा।

प्रस्तुत सों जहँ होति है अप्रस्तुति अस्फूर्ति।
समासोक्ति तासों कहत अलङ्कार सुभ मूर्ति॥ १७९॥

उदाहरन कबित्त।

जग में बिदित कहै कबि आजु रघुनाथ सबही के ऊपर जसीलो जाको गात है। नखते

जे सिख लौं सकल अंग सुधामई आनँद की करता सुन्दरता को पोत है ॥ और गुन सुनो ताकी महिमा कहां लो कहै औषधी को पति वर बुद्धि को उदोत है । तजि दीन्हे लाज देखो परम पुनीत आपु ह्वै कै द्विजराज बस बारुनी के होत है ॥ १८० ॥

अपरंच कवित्त ।

जाचक बिचारि जानि आसरित आपनो है प्रेम-भाव भगति सौं पूरे हिय घर कौं । कहै रघुनाथ फेरि आपनो सरूप देखि आनँद देवया सदाचर औ अचर कौं ॥ आपुही सौं कृपा करि तृपित करै तौ करै उमड़ि घुमड़ि कै बरसि बूंद वर कौं । एतिक सकति है न चातक मैं बरसावै प्यास लागे आपनी गरज जलधर कौं ॥ १८१ ॥

अपरंच कवित्त ।

पथिक न आवैं कोऊ पास तजि दीन्हे आस पच्छी ह्वै उदास चलि बास अनतै गह्यो । साथिनि सदा की जे हीं संग में सहेली बेली जानियै

न किते गई खोज काहू ना लह्यो ॥ टूटे श्राल
वाल एहो कवि रघुनाथ हाल विधि के विरुद्ध
कौन मोपैं जातु है कह्यो। फूले फरे तब जिन्हे
देखे हे बिभात अब तिन बिटपन मैं न पात
एकऊ रह्यो ॥ १८२ ॥

परिकर लच्छन।

दोहा।

अलङ्कार परिकर तहां बरनत हैं सुख भोइ।
अभिप्राय जुत कवित में जहां बिसेसन होइ ॥ १८३ ॥

उदाहरन कवित्त।

निरखि अनूप रूप एरे मन भूलै मति मति
सीखु मेरी सीखैं छोड़ि दे सकल छर। पास
जनि लागै पास आस मिलिवे की राखि राखि आस
जीवे की न ए सकै न डारै डर॥ घायल करैगो
करि हायल तनकही में पायल-पनो तू त्यागु
चायल भयो जो बर। काम के रहत सदा साथ
लाग्यो काम आपु महाबाहु वर सर धर सरासन
धर ॥ १८४ ॥

परिकरांकुर लच्छन ।

दोहा ।

अभिप्राय जुत कवित में कहियतु जहां बिसेस ।
परिकरांकुर होत तहँ अलङ्कार सुभ भेस ॥ १८५ ॥

उदाहरन सवैया ।

रूप अनूप निहारि कै दूर तें देखिबे कों अपनो मन दीन्हो । पाइ दबे चलि पास गयो रघुनाथ कहै अति लोभहि लीन्हो ॥ लोचन के दुख मोचन को सा कहा कहिये रँग नेकु न चीन्हो । बाम के पायल को सुनतै धुनि घायल काम धनुर्धर कीन्हो ॥ १८६ ॥

श्लेषालङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

अलङ्कार अश्लेस सो बरनत हैं कबि लोग ।
जहां अर्थ है तीन को सोभित होत सँजोग ॥ १८८ ॥
है इक बर्न्य अबर्न्य इक बर्न्यावर्न्य सु एक ।
त्रिविध कहत अश्लेस कों कबिकुल सहित बिबेक ॥

बर्न्यादिक लच्छन ।

दोहा

बर्न्यै बर्न्य को स्लेस जहँ है तहँ कहियतु बर्न्य ।
जहँ अबर्न्य को स्लेस है कहियतु तहां अबर्न्य ॥१८९॥

बर्न्य अबर्न्यन को जहां कीजतु है असलेस।
बर्न्याबर्न्य कहैं यहां जेहैं सुकबि सुबेस॥ १८०॥

बर्न्य बर्न्य को श्लेष यथा कबित्त।

रति राखि रहति भगति पाइ बरनी को बरनी कै जगत को जेतवार टेक हैं। सुमन धनुषधर सरन सों सोभित हैं चारुता सुजस लोग गावत अनेक हैं॥ कलानिधि कुल के प्रकाम के करैया कहै कबि रघुनाथ धरैं परम बिबेक हैं। सबही को मन अभिरामता के मोहिबे कों ऐसे समरथ काम एक राम एक हैं॥ १८१॥

अबर्न्य अबर्न्य को श्लेष यथा कबित्त।

सुगुन समेत कहै कबि रघुनाथ सो है परम बिचित्र अंग रंग मैं निहारिये। सुधी सुकुमारन में गनो औ रसीलो घनो धनो को पियारो फूल सिर जा सँवारिये। अलिन को गन छन छोड़त न पास पास बास आस धरैं धरैं धीरज कों भारिये। ऐसो तूं है सुन्दरी सुगन्धनि सों खासी देखि सुमन को न्वला सी तो पै वारि डारिये।

वर्न्यं अवर्न्यं श्लेष यथा कवित्त ।

भरे तन-सुख सिरी साफ सोहै रघुनाथ अतलस रही गज गति मैं बखान है। झिलमिली बन्दी को विराजै पाँति न्यारीनी को काकनी निहारी औ रुमाल सुभ ठान है ॥ गाढ़े कुच की है मेही कामर अलक परी औरऊ चिकन पट कीनो मुख दान है । तुम हौ सुजान वलि गई चलि देखौ साज आजु बनी बनिता बजाज की दुकान है ॥ १९३ ॥

अपरंच कवित्त ।

तू तो लाल करके रे सारस झगर तोते ती-तरतु रमती बटेरे कहियतु है। सिंधुवार कूके रघुनाथ काल सिरी भर तुर्रे करि बानक हरीलै लहियतु है ॥ पौ को बाक सुन कर धूतिप चिते सराहि बर हिय अगिनि बगेरी चहियतु है। कर चोटी बगबगी नाक-बासा बिसरैं दे स्यामा बया कूरन गरूर गहियतु है ॥ १९४ ॥

अपरंच सवैया ।

जीवन बाकी कछूक रह्यो तन भीति भरे

सँग के सब जो हैं। छीन महाई सरोज बिलो-
किये दीन ह्वै पच्छी टरे कितह्वो हैं॥ सूने भए
प्रतिकूल सबै थल जे रघुनाथ बिहार में पी हैं।
सोरी करी घनस्याम तची ब्रजबाम सरोवरो
ग्रीषम की हैं॥ १८५॥

तीन अर्थ को श्लेष यथा कबित्त।

सो हैं जुग चरन बरन ब्रत पाटी चारु
गुननि सो बीनो महा महिमा के ठाट की।
राजति अनूप रूप रङ्गनि अनेक भरी परम नरम
पद सदसुख घाट की॥ प्यारी लागे भोग करता
कों कहै रघुनाथ नित चित बसो हो ते नासका
उचाट की। बिधाता की सृष्टि ऐसे बाट की
बनी है देखो भाट की कबित्त जैसी खाट आठ
काठ की॥ १८६॥

श्लेषाभास लच्छन।

दोहा।

एकै पद औ अर्थ इक है है को असलेस॥
सो असलेसाभास है बरनत सुकबि सुबेस॥ १८७॥

उदाहरन कवित्त।

जोई देखे सोई देखि रहै कहै रघुनाथ बिधि की निकाई गावै एती जेती चहिये। पूरब जनम में करम जौन कीन्हे ताकी होति है प्रतीत मते पोथिन के लहिये॥ और सुनो मन ऐसे नैन को सिखावै पन इन्हें और देखि देखिबे ते बाज रहिये। एतो सब रीति जो तो नीति सों बिचारो तो तो रूप औ कुरूप में न भेद कछू लहिये॥

अप्रस्तुत प्रशंसा लच्छन।

दोहा।

अप्रस्तुति को होति जहँ प्रस्तुति सों अस्फूर्ति।
अप्रस्तुत प्रसंसा कहत अलङ्कार करि सूर्ति॥ १८८॥

उदाहरन कवित्त।

पलक न परति ढरति हैं न कानन लों लाये टक लेस लखिये न बनसी को है। पलटै न रंग अंग परै न सिथिल नेक लागै न तिमिर लाज होतन नजीकी है॥ सीत को न भीत कछू तेज को न रघुनाथ पागति न डर बरु है किरकिरी को है। देखिबे कों बनक बनाइ

बन-माली जू की आली री पंखान पूतरी की आंखि नीकी है ॥ २०० ॥

प्रस्तुतांकुर लच्छन।

दोहा।

प्रस्तुति सों प्रस्तुति जहां प्रगट परत पहिचान ।
प्रस्तुतांकुर ताहि सब कबिजन करत बखान ॥ २०१ ॥

उदाहरन कवित्त।

गंध के समूह मकरन्द-भरे सोहत हैं फूले जहां तहां ए कदंब कमला के घर। कहै रघु-नाथ कह्यो मानै तौ तूं तिन्है सेइ सदा चाहै मुख तौ रिझाइ नीके गाइ कर ॥ याको देखि बिभव बिभूति बड़ो बूड़े मति जाति को करील यह अपत उतार बर। जग में हँसाई ह्वै है चतुराई में कलङ्क भाई भौंर भूलै मति कुसुम ललाई पर ॥ १०२ ॥

अपरंच कवित्त।

निपट कठोर घोर कण्टकन पूरयो तन मूढ़-मन महा कहा गूढ़ गुन गावैगो। कहै रघुनाथ ताते आपनो अगारो चेत हेत मति

करै जानि ही में सोच छावैगो॥ गन्ध को न लेस मकरन्द को न बुन्द यामे छायाऊ न सुखद सँ-ताप तन तावैगो। साहिब सुजान अलि मेरी कही मान यह अपत करील सेयें तू न सुख पा वैगो॥ २०३॥

अपरंच कवित्त।

चाहि रहे चातिक तृषित तजि नदी-नद तापैं तौ न गयो आइ पस्यो सिन्धु सीप-बस। ताकै पंचतत्व तेज पचि परिपाक भयो लालच देखाइ बोस्यो नरनि अनेक कस॥ पहिले जननि हति पीछे ते प्रगट भयो कहै रघुनाथ जग बीच जाको ऐसो जस। विधि की अविधि मति भ-रमी सो देखो ऐसो मुकता अधरमी सो पीवत अधर-रस॥ २०४॥

पर्जायोक्ति लच्छन।

दोहा।

बोध अर्थ निज को जहां होत कहे परजाय।
परजायोक्ति तहां सुकबि बरनत हैं सुख पाय॥ २०५॥

उदाहरन सवैया ।

कालिँदी के दह दारुन ते जिन कालिहि बाहिर नाथि निकारे । इन्द्र को मान सो मर्दन कै जिन बूड़त सों ब्रज मण्डल वारे ॥ चीर हरे जिन गोपिन के रघुनाथ भए अँखियान के तारे। तूं तिनको करि ध्यान सदा जिन कंस से बंस के नायक मारे ॥ २०६ ॥

द्वितीय पर्जायोक्ति लच्छन ।

दोहा ।

छल के बचनन कों जहां सिद्धि इष्ट की होइ ।
दूजी परजायोक्ति सो बरनत कवि सुख भोइ ॥ २०७ ॥

उदाहरन कबित्त ।

कोटिन मनोज की बनक ओप जाकी आगे दबति कलानिधि को खोज कौने काढ़ी है । रघुनाथ हेरि गई हरषि हरिननैनी गहें गाँस पैनी रीझि बतरस बाढ़ी है ॥ जमुना के तट बंसीबट के निकट घनी वह जो कदम्बन की बनी छाइ गाढ़ी है । बछरा समेत तहां साँवरे

तिहारी गाय चली देखि आई हौं देखाइ दैहौं ठाढ़ी है ॥ २०८ ॥

अपरंच कवित्त।

चोप चितै साँवरे की मेहँदी के मिसि ल्याई एहो रघुनाथ गुजरेटी रूप बर की। इतने में चौधि-पास ओऊ इतै आइ गए देखादेखी होत चोट कीन्ही मैन सर की ॥ मालिनि चतुर देखि दसा ऐसें बोलि उठी तुम न बिगाने लाल इऊ नाहीं पर की। जल भरि ल्याऊँ इहाँ कोऊ नाहिँ एक घरी करौ तुम दोऊ रखवारी मेरे घर की ॥ २०९

व्याजोक्ति लच्छन।

दोहा।

निन्दा सौं अस्तुति जहां प्रगट परति है जोइ।
अस्तुति सौं निंदा जहां व्याज उक्ति तहँ होइ ॥ २१० ॥

निन्दा सौं स्तुति यथा सवैया।

कौन सो ख्याल है भागीरथी यह रावरे जी मन बीच समायो। ऐसेनि सौं रघनाथ कहै जग में न कहूं जस जात है गायो ॥ जारज

आदिक जीवन में को हुतो सो नहायो तू ऐसो बनायो। गोतिनि को तजि साथ दियो सँग भूत लिये पशुनाथ कहायो॥ २११॥

अपरंच सवैया।

खारनि तारनि बाग पहारनि नारनि उच्च अगारनि झूमे। लावत हौ भार धावत हौ सुख पावत हौ कितनौ जग कूमे॥ बारिद बूझत हैं तुमसों रघुनाथ कहै यह एतिक तूमे। कौन बिबेक है जौ बरसौ जल मूसरधारनि ऊसरहू मे॥ २१२॥

स्तुति सों निंदा यथा सवैया।

तजि दान को लीबो दियो इतनो हो गोपाल क्यों बातें बनावत हौ। करि है परतीत जो होइ नई अपनो यस जाहि को गावत हौ॥ कछू चाहो तौ लेहु रहौ उतहीं रघुनाथ कहा भरमावत हौ। हम जानती हैं सब दानिन में हौ भले पै चले कित आवत हौ॥ २१३॥

अपरंच कवित्त।

भले बनि आए आजु भले लागे नैननि कौं

भलो मान्यो भले मेरी पौरहि परत हौ । भलो ऐसो को है एहो कबि रघुनाथ भलो तुम्हे जो न कहै भले सोच में परत हौ ॥ भलो है न भ्रम भ्रम छोड़ौ तौ भलो है भलो ह्वै जो हेरी इते भलो एतिक डरत हौ । भले हौ चतुर नख सिख सों भलाई भले भलेन के साथी काम भलेई करत हौ ॥ २१४ ॥

निंदा सों निंदा व्याजोक्ति लच्छन ।

दोहा ।

निंदा सों निंदा जहां प्रगट परति पहिचान ।
सो निन्दा व्याजोक्ति सब कबिकुल करत बखान २१५

उदाहरण सवैया ।

तामस को तन तेजमई मद पूर प्रकासत कूर महा गो । देखतहीं रघुनाथ कहै मन में न डरै तिहुंलोकनि में को ॥ औगुन और गनाइ कहां तक बाद पचै बकबाद करै हो । है अतिहीं वह निंद कलानिधि तोहि गिलै गिलि कै उ-गिलै जो ॥ २१६ ॥

आक्षेपालङ्कार लच्छन।

दोहा।

आपु कहै कहिकै करै आपु निषेध बिचारि।
आक्षेपालङ्कार सो कहत सुकबि मतिसार॥ २१७॥

उदाहरण सवैया।

आवत हो मन है तो भलो उनको कहि औगुन तू उन्है दूसै। ऐसे काँपाइ कहै रघुनाथ हो काँपत ज्यों जग न्हाइ कै पूसै॥ और तो आगे कहाँ लौं कहौं पर एतिक है पल तू नहिं तूसै। जैसे रहो रहि आइ हो ज्यों प्रिय भावता तेरो है तू मति रूसै॥ २१८॥

निषेधाक्षेप लच्छन।

दोहा।

पहिले करै निषेध फिरि पीछे दे ठहराइ।
सो निषेध आक्षेप है बरनत हैं कबिराइ॥ २१९॥

उदाहरण सवैया।

श्रीरघुनायक लायक को रघुनाथ की सौंह कहावत चेरो। इंद्रहि आदिक जे दिगपाल हैं ते सब मानत हैं डर मेरो॥ हे दसकंध महा

मति-अंध उपाव कछू करि जीवन केरो। मोहि तू जानत है कपि है यह मै कपि हौं नहि काल हौं तेरो॥ २२०॥

व्यक्ताक्षेप लच्छन।

दोहा।

व्यक्ति जहां विधि होइ औ छप्यो होइ आक्षेप।
व्यक्ताक्षेप तहां सुकवि बरनत हैं बुधिलेप॥ २२१॥

उदाहरन सवैया।

आए हौ बूझन मोसौं कृपा करि आपु हौ जीते महा मन सेस को। मै केहि भाँति मने कै सकौं रघुनाथ मैं जाने हौं नेह नरेस को॥ ये बिनती यह एक हमारी है मानौ तो मानौ है कारन वेस को। होरी के बासर गोरी की वैस बिचारि कै कीजो बिचार बिदेस को॥२२२॥

अपरंच सवैया।

रावरे जो चलिबे कौं विदेश को बिप्रन बूझि बिचार कियो है। कीजिये सो सुभ कारज कौं मन में पन जो रघुनाथ लियो है॥ मोहि न और अँदेसो सुनौ सुनि एतिक काँपत मेरो

हियो है । बाम बियोगिनि के बध कीबे कों काम बसंतहि पान दियो है॥ २२३ ॥

बिरोधाभास लच्छन ।

दोहा ।

जहां जु अर्थ बिरोध को होत आइ आभास ।
तहां बिरोधाभास कबि बरनत हैं सुखरास ॥ २२४ ॥

उदाहरन कवित्त ।

मोतिन की माल साल पै है सुनि आई गुरु लोगन पठाई बाल बरनी न जाति है । रघुनाथ भाँवते को धन मन करखैं को बैस को सुभाव सा यों प्रगटै बिभाति है ॥ सकल समेटि अंग उपरैनी में लपेटि बैठो पलिका पै संग सुर मुसक्याति है । लोचन बचाइ लै डबा सो पान खावै आपु कैहौं सोहैं खाति न खवैं।य सोहैं खाति है ॥ २२५ ॥

अपरंच सवैया ।

देखि के दोष अदोष कहै रघुनाथहि सों ऐसो कौन वही है । काहू चबाइन सों सुनि कै सो ब्रुथा तजि कै रस रास नहीं है ॥ सोतिन मैं

अब आजु बलाइ ल्यों तेरोई एक सोहाग सही है। मान करै पिय मान करै मति मान कही मतिमान कही है ॥ २२६ ॥

बिभावना लच्छन ।

दोहा ।

कारन बिनु जहँ होति है कारज की उतपत्ति ।
बरनत तहां बिभावना अलङ्कार सुभमत्ति ॥ २२७ ॥

उदाहरन सवैया ।

पान के रंग बिना अधरा रघुनाथ सराहन पूरन सौ कै । आँगी बिना अति सोभित होत उरोज मनोहर मण्डन ही के ॥ रावरे के दृग प्यारी बलाइ ल्यों राति जगे सुख नो संग पी के। आलस बीच पगे मनरंजन आजु लगें बिनु अं-जन नीकै ॥ २२८ ॥

अपरंच सवैया ।

लावत मै न सुगन्ध लह्यो सब सौरु को तन देत दसी है । अंजन रंजन हू बिन स्याम बड़े बड़े नैननि रेख लसी है ॥ ऐसी दसा रघुनाथ लखें एहि आचरजै मति मेरी फसी

है। लाली नवेली की ओठनि में बिनु पान कहां ते धौं आनि बसी है ॥ २२९॥

हेतु-बिभावना लच्छन।

दोहा

कारन के असमर्थहू कारज पूरन होत।
तासों हेतु बिभावना कहत कबिन के गोत ॥ २३०॥

उदाहरन कबित्त।

इनहो के बैर कोप छाड़ पाकसासन जू सासन प्रलै के करिबे को आपु करे हैं। मूसर की धार धाराधर बरषत बारि पारावार को पसार करिबे को अरे हैं॥ कोऊ न सहाइ करै एहो कबि रघुनाथ सचिते से बैठे अब सब ब्रज तरे हैं। कमल के सरि सो है परम नरम कर तापैं गिरिधर लाल देखो गिरि धरे हैं॥ २३१॥

तृतीय बिभावना लच्छन।

दोहा।

कारन प्रतिबन्धक रहे होइ काज को सिद्धि।
तासों तृतिय बिभावना कहत सुकबि बुधिनिद्धि ॥२३२॥

उदाहरन सवैया।

जागि तें आलस-पागि लसैं किये बाम को

बास सों बागे बसीले । चन्दन लाग्यो उरोजनि को उर भाल को बन्दन भाल लसीले ॥ भोरहि आए भरे रँग यों रघुनाथ सनेह के सोच सलीले । देखतहीं हिय पाइ के चैन मिली गुन गोरि के नैन रसीले ॥ २३३ ॥

चतुर्थ बिभावना लच्छन ।

दोहा ।

होत अकारन ते जहां कारज की उतपत्ति ।
बरनत तहां बिभावना चौथी कबि सुभगत्ति ॥ २३४ ॥

उदाहरन सवैया ।

ऐसेनि को अपराध न कीजिये लीजिये भावते सीख लसीली । राखिये रीझि रिझाइये यों रघुनाथ बिसारि के बान गँसीली ॥ मैं सुनि मान गई लखिबे कों सो ऐसी लसी गुन गोरि जसीली । मो दिसि हेरि हसीली सी ह्वै के महा रिसि में कही बात रसीली ॥ २३५ ॥

पंचम बिभावना लच्छन ।

दोहा ।

कारन तें उपजत जहां कारज परम बिरुद्ध ।
बरनत तहां बिभावना पंचम कबि मतिउद्ध ॥ २३६ ॥

उदाहरन कबित्त।

चातिकं घातिक मिले घातु को बिचारि कै कै बोलि छोलि कानन करेजो करसत हैं। फूलि फूलि कदम करीलन के बन बाग लोचन सों लागि रूप दावा दरसत हैं॥ तालनि तमालनि परसि सौरे धौरे पौन रघुनाथ अंगनि लुवैं ह्वै परसत हैं। डारैं जिय जारे दईमारे हारे हारे आजु भारे बारि बारिद अँगारे बरसत हैं॥ २३७॥

अपरंच कबित्त।

जानिये न कहा भयो जमुना लों अबै जात आँखिन तें बह्यो जात आँसुनि को सोत है। सेज पर परी तलफति जलपति देखि दासी संग बासी औ बिकल सब गोत है॥ रघुनाथ कीजत जतन सौरो सौरे हेत कहिये कहां लों कछू परत न ओत है। चाँदनी में ल्याए औ गुलाब सों न्हवाए तन चन्दन लगाये तें तपित औरो होत है॥ २३८॥

छठीं बिभावना लच्छन।

दोहा।

कारज सों जहँ होत है कारन को परकास।
बरनत छठो बिभावना सुकबि सुमति के रास ॥ २३९ ॥

उदाहरन सवैया।

जानति हो न बसंत को आगम बैठी ही ध्यान धरें निजु पी को। एते में कानन ओर सों आइ कै कानन में पस्यो बोल पिकी को ॥ है रघुनाथ कहा कहिये कहि आयो हा आयो गयो हरि ती को। लोचन बारिज सों अँसुवा को अथाह बह्यो परवाह नदी को ॥ २४० ॥

बिशेषोक्ति लच्छन।

दोहा।

आछत कारन बहुत के जहां न कारज होइ।
बिशेषोक्ति बरनत तहां अलङ्कार सुख भोइ ॥ २४१ ॥

उदाहरन सवैया।

बैठी बिसूरति ही पिय आगम एते में कोइल की सुनि बानी। जागि उठी बिरहागि महा लखि मैं रघुनाथ को सोंह सकानी ॥ चन्दन लाइ मिलाइ कपूर निसा भरि सींच्यो

गुलाब के पानी। कौन कहै बतियाँ निसि की न तिया की तऊ छतियाँ सियरानी ॥ २४२ ॥

असंभव लच्छन।

दोहा।

अर्थ असम्भव को जहां देखौ बरनन होइ।
कहत असम्भव ताहिँ कवि अलङ्कार सुख भोइ ॥२४३॥

उदाहरन सवैया।

बात कहा दह भीतर की गहि लेत है ऊपर आइ कै हालो। एकहू द्यौस कहै रघुनाथ पर्यो पसु मानुष सौं नहिँ खालो ॥ आजु की बात कहा कहिये कहि आवत है कछु मोपै न आलो। नाथि कै कालिन्दी सौं कियो बाहर कालिह कै छोहरा काल सो कालो ॥ २४४ ॥

अपरंच कवित्त।

कदम पै चढ़ि जब कूद्यो कालिँदी के बीच तब यह जान्यो कान्ह कैसें धौं उबरिहै। यामे विषधर को है बास महा विषरास बासौं भयो पास तौ उसासही सौं जरिहै ॥ ऐसो कौन जानत हो कवि रघुनाथ बूड़ि घरी है लौं तरे पानी-

हौ के लरिहै । सीस पर चढ़ि आपु ताली दै करत नृत्य नाथि काल काली कालीदह सों निकरिहै ॥ २४५ ॥

असंगति लच्छन ।

दोहा ।

कारन औरै ठौर है कारज औरै ठौर ।
कहत असंगति ताहिँ सब जे हैं कवि सिरमौर ॥२४६॥

उदाहरन कवित्त ।

दूत सों ही जात प्रात जमुना अन्हाइबे कों साँवरो उतै सों आयो गात रूप वै गयो । औचका हीं भेट भई देखा देखी भई भई ऐसी कछू दशा जो सकल ग्यान ख्वै गयो ॥ दाह जागी देहँ में कराह रसना कैं बीच रघुनाथ सखिन के आंह नभ भ्वै गयो । नैननि सों लागे आनि नैन बान एरी सखी पीर बाढ़ी प्रान में करेजो रेजो ह्वै गयो ॥ २४७ ॥

अपरंच कवित्त ।

खरिका उजारी डेल डारी गेह लोगनि

को पोयो दूध दही मही पैठि सूने ठाँव में। काहू गोप लंलो कों कुसुम-कली मारी काहू नाँउँ लै पुकारी काहू गह्यो पाय दांव में॥ हम सों न लिखो देखो तुमहीं धौं रघुनाथ ईठ को डरन डीठि दीन्हे चले पाँव में। साथ के रहे ते ऐसो भयो है कुनाउँ करो तुम औठ पाँव पावैं हम गारो गाव में॥ २४८॥

द्वितीय असंगति लच्छन।

दोहा।

कियो चह्यो थल और हीं कियो और ही ठौर।
कहत असंगति दूसरो अलङ्कार सिरमौर॥ २४९॥

उदाहरण सवैया।

तब तौ करनादिक कौरव सों मिलि एक मते करिकै मन कों। इनको भलो चाहि बुरो उनको रघुनाथ कहै पहुँचे बन कों॥ अब देखत ही रचना प्रभु की सब त्याग करे पकरे पन कों। दुरबासा जुधिष्ठिर कों गए सापन साप दियो दुरजोधन कों॥ २५०॥

तृतीय असंगति लच्छन ।

दोहा ।

जौन काम चाह्यो कियो ताको कियो बिरुद्ध ।
कहत असंगति तीसरो अलङ्कार मति-उद्ध ॥ २५१ ॥

उदाहरन सवैया ।

आज महा रितुराज बली के ए हैं बनि आवत हैं लखतेहीं । जात कह्यो न कहा कहिये रघुनाथ कहै रसना इक एहीं ॥ साल रसाल तमालहि आदि दै जेतिक वृच्छ लता बन जेहीं । नौ दल कीबे को कीन्हो बिचार तौ कै पतझार दियो पहिलेहीं ॥ २५२ ॥

बिसम लच्छन ।

दोहा ।

जहँ घटना समरूप को कवि नहिं करत बखान ।
विषम अलंकृति कबित में लेहु तहाँ पहिचान ॥२५३॥

उदाहरन कबित्त ।

जौं तू चाहै तन मन लोचन सफल कियो कहै रघुनाथ तौ न कीजै सोच स्रम को । प्रगट को खाद सो न भवन तें पायो जात प्रगट को

प्रगटै बिचार छोड़ो स्रम को॥ मोसों जो कहति है कि देखि आई मोसों कहि कहिबे को जोग है न बकता निगम को। कहां मेरो मुख अति अलप गिरा को सखी कहां सुख कुँवर-कन्हैया के जनम को २५४॥

अपरंच कवित्त।

लौटि लौटि लेत हैं करौट पलिका पै परे आरे न तनिक चैन ऐसो हाल हाल को। काहू की न चाह मुख राह कै कराह राख्यो जल पर-वाह बाढ़्यो लोचन बिसाल को। क्यों न होइ ऐसी दसा देखादेखी रघुनाथ देखौ न कहति हौं बचन झूठो आल को। कहां तेरे लोचन के तीछन कटाच्छ बान कहां हीय परम नरम नंदलाल को॥ २५५॥

द्वितीय विषम लच्छन।

दोहा।

उपजत कारन तें जहां कारज परम विरूप।
विषम अलंकृत दूसरो बरनत हैं कबि भूप॥ २५६॥

उदाहरन कवित्त।

स्याम सेत हरित अरुन पीत आदि दै कै रंगन की करता बिदित वस्तु जेती हैं। नीकी भांति निरख्यो है मेको न परत बीच ऐसे आपु आपनो सुभाव लियें तेती हैं॥ सरस परस करैं जाको ताकों रघुनाथ गोत रूप दै कै जातरूप करि लेती हैं। सुरसरि जी को यह देखत ही काम आपु सुधाहू सों सेत औरैं स्याम करि देती हैं॥ २५७

अपरंच कवित्त।

जाको जैसो रूप ताकों तैसिये सकति औरै आप सो करत जब भेटै भरि हियरे। केसरि कुसुम नील आदि दै कै देखि लीजे प्रगट कहै है रघुनाथ बोल सियरे॥ मनसा महीप जस रावरो सुधा के अंग एते रंग मांड़े आपु होत जहां नियरे। सेत-मुख सूम के अदेखी के असित मुख लाल मुख मीत के अमीत मुख पियरे॥ २५८॥

तृतीय विषम लच्छन ।

दोहा ।

उद्दिम करते इष्ट कों होत जो तहां अनिष्ट ।
विषम अलंकृत तीसरो अलङ्कार की सृष्टि ॥ २५९ ॥

उदाहरन कबित्त ।

सिसुपाल आदि दै के जेते महिपाल तेते कहै रघुनाथ बूझो आपनी इजति कों । कुंवर कन्हैया जू को प्रगट प्रताप बूझि बूझि के सुजस और कीरति बिसद कों ॥ ठौर सों न टरे अरे जहां के तहां हो रहे खरे बल भरे-बीर धरे मौन गति कों । रुकुम को मति देखो अति उतायल आपु गयो पति राखिबे को आयो खोइ पति कों ॥ २६० ॥

अपरंच कबित्त ।

रास में लिवाइ गयो मोहि मन मोहन कि मोहन के मोहिबे कों ऐसे आपु छुटि गो । कहै रघुनाथ कछू मोपैं न बखानी जाति और बीच भरम्यो न सोंहैं जादू जुटि गो ॥ आनन की चमक में नाचन की झमक में सौरभ की

धमक में धीरज सो छूटि गो। मुरि मुस-
क्यानि बीच कछू न बसानो आजु आली एक
छन में गुमानी मन लूटि गो॥ २६१॥

चतुर्थविषम लच्छन।

दोहा।

होइ अनिष्ट न समुझि यह उद्यम कीन्हें इष्ट।
प्रापति जहां अनिष्ट की भई सो चौथो इष्ट॥ २६२॥

उदाहरन सवैया।

बैर परीछित के जनमेजय व्याल बिना ब-
सुधा करिबे कों। जग्य रच्यो रघुनाथ कहै कुल
उहित आठ भए मरिबे कों॥ तच्छक भागि
गयो सुर के पुर देखि दसा दुख सों बरिबे कों।
वेद के मन्त्रनि इन्द्र समेत सो लै सुरवा पैं धयो
जरिबे कों॥ २६३॥

पंचम विषम लच्छन।

दोहा।

उद्दिम करते इष्ट को सिद्धि इष्ट की होइ।
होइ अनिष्टउ की तहां प्राप्ति सो पंचम जोइ॥२६४॥

उदाहरन कबित्त।

कितनो सुनायो मन्त्र मन्त्री कहै रघुनाथ

मन में न ल्यायो एतो छायो मद्दा तम को। कहिये कहां लों और आज तीनों लोक बीच आको सर कोजे ऐसो दूसरो अधम को ॥ पति ले मरीचै नीचै पठयो मृगा कै पाछे पीछें आए गयो कै सरूप साधु सम को। दुष्टन को ईस दससीस सुख करिबे कों सीतै हरि ल्यायो आपु पायो लोक जम को ॥ २६५ ॥

षष्ठ विषम लच्छन।

दोहा।

उद्दिम करतें इष्ट को होइ न इष्ट अनिष्ट।
विषम अलंकृत में कहत कबि करि भेद उद्दिष्ट ॥२६६॥

उदाहरन सवैया।

सूर सों माँगि प्रभा प्रति पून्यों कै छीरसमुद्र में जाइ अन्हात है। उज्वल कै किरनैं अपनी रघुनाथ किये रँग लाल बिभात है ॥ रोज की हार चिते ससि राधे सों जीतिबे कों कितनो अकुलात है। कौन कथा कहिये मुख देखत खेद सों फेरि सपेद ह्वै जात है ॥ २६७ ॥

अपरंच सवैया।

घूमि चहूं दिसि झूमि रहे घन बुन्दन तें छिति ढारत लोढें। कौंधति दामिनि कूकत मोर रटैं मिलि भेको भयानक टाढें॥ ऐसी समै छोड़ि औध की आस जो दै रघुनाथ कों आ-छुड़ि पोढें। गति कितौ बेरिआ लौं खरे रहे खोरी तरें दुपटा इक आढें॥ २६८॥

सप्तम बिषम लच्छन।

दोहा।

औरन को करतें बुरो बुरो आपनों होइ।
भेद सातमों बिषम को कहत सुकबि सब कोइ॥२६९॥

उदाहरन कबित्त।

भुजन के बल दल मलि तीनो लोकनि कों कहै कबि रघुनाथ करि अपनो लयो। सुरपति आदि दै कै बीरता बिसाल ऐसो को है दिग-पाल हाल जौने दण्ड ना दयो॥ जातुधान परम अमान परमातमा को नाम अभिराम आजु सु-नतें महा तया। कोप बस ह्वै कै हिरनाकुस उ-दित पछलादै मारिबे कों गया आपुही मारो गयो॥ २७०॥

अपरंच कवित्त।

दुष्टनि को अवतंस कंस तासों बिदा मागि कहै कबि रघुनाथ महा मोद सों भरो । गोप-बधू ह्वै के गोप-बधुन के साथ ह्वै कै खरो पलका के पास भई काहू ना डरो ॥ करता को करनो को करि सरि सके कोन ऐसो कछू प्रगट देखाई नैन कों परो । नाहीं करिबे कों आई जसुदा के पूत को सो जसुदा के पूत पूतनाही को नाहीं करो ॥ २७१ ॥

अपरंच कवित्त।

मैं हौं कैधौं और कोई ऐसो न समुझि परै परै न तनिक चैन ऐसी दसा तन की । सीत बात आतप सलिल एक रीति मानै एक रीति मानै छहौं रसन को अन की ॥ रघुनाथ कहा काहौं बूझ्यो न परत कछू भीति दुरजन की औ प्रीति गुरुजन की। देखि स्याम घन जू को बनि बृन्दावन गई मन बिनु करिबे कों भई बिनु मन की ॥ २७२ ॥

सम अलङ्कार लच्छन।

दोहा।

जहँ रचना सम रूप की कबिजन करत बिचारि।
अलङ्कार सम कबित में कहियतु तहां निहारि ॥२७३॥

उदाहरन सवैया।

है न गँवारिन जाई गँवार की रीति गँवारिन को न गही है। काहे कों तू इतनो अकुलाइ के ओठ अमैठि बिसूरि रही है ॥ ढीठो दिये लघु लोगनि के रघुनाथ बड़े लघुता न लही है। जानति है इनकों इन आपनो जाति के माफिक बात कही है ॥ २७४ ॥

द्वीतीय सम लच्छन।

दोहा।

कारन के सारूप्य में कारज बरनन होइ।
जहां तहां सम दूसरो अलङ्कार में जोइ ॥ २७५ ॥

उदाहरन कबित्त।

कितनी मनाई पै न आई तेरे मन बीच कितनी सुनाई प्यारी प्रान को दुचित है। नाही मुख निकसी सो निकसी है दृढ़ ह्वै कै करिबे कों ही सो बूझ्यो अति अनुचित है ॥

अब सब बूझि परी रघुनाथ की दोहाई अब न कहौंगो कह्यो चाहत जो चित है। तेरी हठहाई सठहाई जो परो है बान आई तू अहीर की है रीतो को उचित है ॥ २७६ ॥

तृतीय सम लच्छन ।

दोहा ।

क्रिया करी जो अर्थ की सोई इष्ट बिनु सिद्धि ।
बरनत हैं सम तीसरो अलङ्कार मति वृद्धि ॥ २७७ ॥

उदाहरन सवैया ।

साहब की सुनि के बड़ी सम्पति के अपनी मति की गति ताजी । बूझि बड़ेन सों आए इहां निरखि रघुनाथ भयो मन राजी ॥ मास छ सात लौं सेवा करी करि कै कविता कल कीरति साजी । चाहत हे तुम सों हम बाजी कियो उचितै जो दियो हमै बाजी ॥ २७८ ॥

विचित्रालङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

इच्छा फल बिपरीत की करि कै करै जो यत्न ।
सो बिचित्र कबि कहत हैं अलङ्कार में रत्न ॥ २७९ ॥

उदाहरन कवित्त।

दीपदान करत मसान बीच बसिबे कों अरपत माल व्याल कण्ठ लपटैबे कों। सरस पियूष हू सों मधुर मधुर मेवा राखत नैवेद्य राखि जी में विस खैबे कों॥ चरचि सुगन्धनि सों एहो कवि रघुनाथ बसन चढ़ावै न बसन फेरि पैबे कों। बसुधा की मति देखो गंग के सलिल बीच धोवत हैं अंग आगे भसम लगैबे कों॥ २८०॥

अपरंच सवैया।

तीरथ न करैं नेम ब्रत को न धरैं एकौ भूलि हूं न परैं काहू सज्जन के संग में। राति में न जागैं ध्यान जोति के न पागैं कहूं कैसेहू न लागैं कहे कोऊ काहू ढंग में॥ वेद को न भेद अव-गाहती हैं रघुनाथ निपुन भयो न चाहती हैं जोग अंग में। करिबे को उज्जल सुधा सों अभिराम देखो मन ब्रजबाम रँगती है स्याम रंग में॥ २८१॥

अधिक लच्छन।

दोहा।

बरनत बड़े अधार सों जहँ अधेय अधिकाय।
अलङ्कार सो अधिक है लखि लीजो सुख पाय ॥२८२॥

उदाहरन कवित्त।

रावरे को रूप नखसिख लों सराहि काहू मोहन सो कह्यो कह्यो गुन अवदात है। मि-लिबे को अभिलाष एतिक बढ़्यो है सुनो रघु-नाथ को दोहाई सुनिबे को बात है॥ बेद भेद पाइ कै अमित ब्रमाण्ड कहै सो सब प्रलै में लीन उनमें ह्वै जात है॥ ऐसो बड़ो गात ताको अक्षर अनन्त ताको सुजस बिभात तऊ तोमें न समात है॥ २८३॥

द्वितीय अधिक लच्छन।

दोहा।

जहँ अधेय को अधिकाई अधिक होइ आधार।
तासों सब कबि कहत हैं अधिक अधिक बिस्तार॥

उदाहरन सवैया।

श्री ब्रजराजै बिराट सरूप कहैं जिन बेदनि

को रस चाख्यो। देखि सक्यो नहिं देखिबे कों चतुरानन आपु कितो अभिलाख्यो। मोपे कछू गुन रावरे को रघुनाथ की सौंह न जातु है भाख्यो। तूं धनि तू धनि है धन में धन जो अपने मन में तुम्हें राख्यो॥ २८५॥

अपरंच कवित्त।

हरि हर इनकों लिखे हैं वेद बड़े करि सब मैं जो बनी यह सृष्टि है तिरह को। तिनको न काम आधो जाम जो सँभारि सकैं रघुनाथ डोरी छूट ध्यान के गिरह को॥ और अबलनि को बखान कहा कीजे यह बात सुनि लीजे न कहति हौं निरह को। एतो बड़ो मन मोहि धन को है लाल जामे बसति बिसाल बिथा रावरे बिरह को॥ २८६॥

सूक्ष्म अलङ्कार लच्छन।

दोहा।

सुच्छम जहां अभेय सों सूछम होय अधार।
सकल सुकवि बरनन करत सो सुछमालङ्कार॥२८७॥

उदाहरन सवैया।

आगे तें ऐसो सोहागिन काहू कों कीन्ही जो चूक परे कछु काहे। कीन्ही तौ कीजे निबाह बलाइ ल्यों वैसेही मोहि यों जैसही मोहे। ऐसी दसा अब कीहे सुनौ रघुनाथ की सौंह भयो पल दो है। आपु तौ आए हौ रूसि लला उनकौ तौ छला को बलै भयो सोहै ॥ २८८ ॥

अन्योन्यालङ्कार लच्छन।

दोहा।

अब कवि यों बरनन करें अन्योन्यालङ्कार।
जहां परसपर करत हैं आपुस में उपकार ॥ २८९ ॥

उदाहरन सवैया।

वै उनको अपराध करें नहिँ वै उनसों न उदास करें चित॥ वै मित राखे रहैं उनको रघुनाथ वै राखे रहैं उनको मित॥ प्रेमपगे दोउ आपुस में एहि भांति बरोबरि क्यों न बढ़े हित। वै सुख देत रहैं उनको नित वै सुख देत रहैं उनकों नित॥ २९० ॥

अपरंच सवैया।

गोरस को न बिसात कछू खरचो नहिँ ला-

गत मोल महो को । आनि परे को बड़े रिझवार हैं पाठ पढ़े दोउ प्रेम बशी को ॥ यातें हठे रघुनाथ कहै सुख चाहत बातन के रसही को । देहिँ गोपाल न जान लिये बिनु, ग्वारिन देहिँ न दान दही को ॥ २९१ ॥

विशेष लच्छन।

दोहा।

बरनन बिन आधार के कीजत जहां अधेय ।
अलङ्कार कबि कहत हैं सो विशेष सुखदेय ॥ २९२ ॥

उदाहरन कवित्त।

परम पुनीत पून्यो जानि कातिकी की आजु न्हाइबे कों इतें भयो ऐबो एक छिन को । कहिये कहां लों एहो कबि रघुनाथ सुनो गई गयो तब सों है दोइ जाम दिन को ॥ चकितचकोर कोर नैन को न मोरि सकैं देखो ऐसे छके हैं सरूप देखि तिन को । अंध भये डोलत मलिंद मोद-पागे ऐतो अब लों है पसस्यो सुगन्ध पदुमिन को ॥ २९३ ॥

अपरंच सवैया ।

काम कें बान कमान बिना सिलि फूलनि सों करै घायल लेखो । याते हौं दूरि करै कहौं चौसरतू हठ कै कहै हीय पै मेखो ॥ सीतल ह्वै बे को चाँदनी में रघुनाथ को सोंहैं जो ह्वै बे को लेखो । जारत हैं ससि में बसि के सखी देह दिवाकर के कर देखो ॥ २८४ ॥

द्वितीय विशेष लच्छन ।

दोहा ।

एक वस्तु को कीजिये ठौर अनेक बखान ।
दूजो भेद विशेष को बरनत सकल सुजान ॥ २८५ ॥

उदाहरन सवैया ।

जाति हौं जो जमुना में अन्हान तो हैं जमुना हीं में मो सँग लागे । आवति हौं घर कों रघुनाथ तो आवत हैं घर में बने बागे ॥ जो मुख मूंदि कै सोइ रहौं तो वे सोवतु हैं मन में सुख पागे । खोलि के आंखि जो देखौं सखी तो वे ठाढ़े हैं आइ कै आंखिन आगे ॥ २८६ ॥

अपरंच कवित्त।

बैठति हौं जाइ गुरुजन में तो उतै आइ महा मोद छाइ मासों मया कै हँसत हैं। सोइ रहौं जो तो आपु सोवैं उर अन्तर में जागौं तो जगे तें मोहि अङ्क में भरत हैं॥ पीछे फिरि देखौं तो हैं पीछे खरे रघुनाथ देखौं बाये दाहिने तो उतहीं बसत हैं। जब चाहौं तब जहां चाहौं तहां एरी भटू जैसे चाहौं तैसे आनि आगे ही लसत हैं॥ २९७॥

उदाहरन सवैया।

प्रथमहीं पुहुमी के प्रतिपाल करिबे कों पृथु के जो लिखी ब्रह्मा पूरी प्रभा अति की। कहै रघुनाथ सोई देखि कै दिलीपहू कै रघहू के लिखी सोधि सुन्दर बिरति की॥ भुजदण्ड वली बरिवण्डसिंह महाराज राजनि की मति देखो कृपा अभिगति की। बिसद बिसाल पाँति वारी भाल तेरे लिखी वांसये सकल की नकल वाही प्रति की॥ २९८॥

तृतीय विशेष लच्छन।

दोहा।

वस्तु असक्य मिले जहां किये अलप प्रारम्भ।

सो विशेष है तीसरो कहत सुकवि मद दंभ॥ २९९॥

उदाहरन कवित्त।

ऐसो रूप ऐसो रंग ऐसें रहिवे को संग उन हूं को हू है हो सुभाव लीन्हे सति कों। सकल कलानि की कुसलताऊ ऐसी हू है ऐसी भांति हू हैं दोऊ राखे प्रेम अति कों॥ सौंह रघुनाथ को न सुख-देखी कहति हौं हू है गहे ऐसे ही मोहनता को गति कों। चिर जीयो दम्पति असेष मति भरे आजु तुम्है देखें देख्यो रति कों औ रतिपति कों॥ ३००॥

व्याघात लच्छन।

दोहा।

अन्यथाकारी को तथा कारी बरनन होत।

अलङ्कार व्यघात सो कहत सुकवि के गोत॥ ३०१॥

उदाहरन कवित्त।

लछमन जू की सब की सो दसा देखतही सुगिरीवै आदि दै के घोरे सब दल तें। स-

हित सयान सावधानी एकहू न रही हाइ हाइ भनैं हनैं छाती करतल तें॥ रावरे की कौमति कही न मोपैं जाइ कछू कहै रघुनाथ मेरी भरी मति मल तें। भुजन के बल मारि रावन सुमार कीन्हें पौन के कुमार तैं जियाए भुज बल तें॥ ३०२॥

द्वितीय व्याघात लच्छन।

दोहा।

सुकार्य निबधी क्रिया कार्यबिरोधी होइ।
अलङ्कार व्याघात कबि दुतिय कहत सब कोइ॥ ३०३॥

उदाहरन सवैया।

सासन मानि पिता को चले बन मोहि कृपा करि कै इमि मोड़ो। हौ बलहीन रहौ घर में घरहौ सब है परिवार सगोड़ो॥ तो कहिये इतनी रघुनाथ कहैं बिन होय करै जिय खोड़ो। जो तुम जानत हौ हम को अबला तो हमैं कबहूं मति छोड़ो॥ ३०४॥

अपरंच सवैया।

हौ सब भांतिन ते समरत्थ भए भव व्या-

पक पूरन राजो। आपनी ओर चितै चित में निज बाने की बानि सनेह सों साजो॥ वातें करौ मति और कछू रघुनाथ बिनै सुनिबे तें न भाजो। जानत हौं तुम मोहि गरीब तौ मोहि गरीब-नेवाज नेवाजो॥ ३०५॥

कारणमाला लच्छन।

दोहा।

प्राक प्रांत कारनन को गुंफित माला होइ।
तासों सब कबि कहत हैं कारनमाला सोइ॥ ३०६॥

उदाहरन कवित्त।

प्रथम ही दूती मिलै दूतिका सों मन मिलै मनके मिले ते मिलै भेद काहू बाम को। भेद मिले बाम को मिलति चोप मिलिबे को मिलिबे की चाप सों मिलत जप नाम को॥ जप मिले नाम को सुकवि रघुनाथ कहै तासों मिलै हरष खरिचिबे कों दामको। दाम के खरचिबे के हरष सों मिलै आइ सकल उपाय तासों सब सुख काम को॥ ३०७॥

अपरंच कबित्त।

परम पुनीत परमारथ की राह सुनो एहो कवि रघुनाथ वेद के प्रमान की। मुकुति की लालसा प्रथम मिली चाहो मिले लालसा के मिलति नवनि गौके ठान की ॥ नवनि सो साधु मिलै साधु सौं सुमति मिलै सुमति सों सरधा है मिलति बखान की। सरधा सों गुरु मिलै गुरु सों मिलत ग्यान ग्यान सों मिलति कृपा पुरुष पुरान की ॥ ३०८ ॥

एकावली लच्छन।

दोहा।

गहि गहि छोड़त अर्थ को करि सेनो सुख पाइ।
तासों कहत एकावली जग में सब कबिराइ ॥ १०८ ॥

उदाहरन कबित्त।

जेते साधु सुमति अगाध बसुधा में बसैं कीन्हे बाधा कोह द्रोह छोह मोह काम के। कहत हैं ऐसे तें वे वेदन कों साखी दै के निजु ठहराइ ग्यान महातिम नाम के ॥ रघुनाथ जग बीच जीवन सुफलताको मन लाग्यो प्रेम जाको

गुरु गुन धाम के। गुरु लाग्यो कान सो लग्यो है कान प्रानं सों सुप्रान लाग्यो पाइ सों अजान-बाहु राम के ॥ ३१० ॥

अपरंच कवित्त।

कहा राजपूत कहा मोगल पठान कहा कहा सेख सैयद सपूत पनो पन पैं। काहू को न रहत गुमान कहै रघुनाथ साहब को ऐसो तेज व्यापत सबन पैं॥ भुजदण्डबली बरिवण्डसिंह महाराज तुम सों को फते पाइ सके आइ रन पैं। साहब के आगे फौज फौज आगे पीठि कीन्हे आपु चले कालडाठि दीन्हे दुसमन पैं॥ ३११ ॥

मालादीपक लच्छन।

दोहा।

जहां जोग एकावली को दीपक में होइ।
मालादीपक कहत हैं कबि-आनंद समोइ ॥ ३१२ ॥

उदाहरन कबित्त।

घोरि घोरि घनसार नीर में गुलाब के जो चन्दन समेत लै चढ़ावती हो तन में। याको कहा चली न तनक सीरी ह्वै सकति बोरि किन

राखी राति बरफ के बन में ॥ आधि व्याधि औ उपाधि टरति उपाय कीन्हे रघुनाथ याको कहा कीजे प्रेम-पन में । दावानल पियो सो बस्यो है हिये मोहन के मोहन बसेरो कियो आपु याके मन में ॥ ३१३ ॥

सार अलङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

उत्तर उत्तर बरनिये जहां अर्थ उतकर्ष ।
अलङ्कार सो सार है उपिठै सुनत न वर्ष ॥ ३१४ ॥

उदाहरण कवित्त ।

जीवन है सार तासों सम्पति को बिसतार सार सार तासों परिवार भौन भरिये । रघुनाथ तासों ऊँचे नीचे को बिचार सार तासों सार सबही को भार हिये धरिये ॥ तासों सार विद्या को पसार कीबो बसुधा मैं तासो सार नेह के नवनि तासों ढरिये । तासों है हो सार सुद्ध भगति मुरारि जू की तासों सार काहू को जो उपकार करिये ॥ ३१५ ॥

क्रमिका लच्छन।

दोहा।

जथारथे क्रम लाइये अन्वय सों गहि रीति।
क्रमिका सब कवि कहत हैं अलङ्कार करि प्रीति॥३१६॥

उदाहरन कवित्त।

अजौं ना उपाय कछू करतौ हौ मिलिबे को मोहन सों तोहि कौनै कुमति दई दई। आरसी में देखि धौं रह्यो है कहा बाको अब जोबन के ऐबे में औ जैबे में लरिकई॥ रघुनाथ श्रीफल करिय-कुम्भ कोकन को कुच कठिनाई उच्चताई जुराई ठई। कंजन को खंजन को मीनन को नैननने जोति लई बिसदई स्यामतई चपलई॥३१७॥

अपरंच कवित्त।

हरि हरि हर को बज़र चक्र तिरसूल तिहि को उबारि सार करतार तन को। बाड़व की अगिन गलाय गढ़ी किरपान पानिप चढ़ायो आनि कालकूट बन को॥ सोई हाथ आई रावरे के राजा बरिवण्ड कहै रघुनाथ गुन गाँथि

उहि पन को । 'काटिबो बिपच्छ-पच्छ पालिबो सरन आये देस लीबो गाँस कीबो नास दुसमन को ॥ ३१८ ॥

पर्याय अलङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

एकै जहां अनेक थल थापि करी परयाय ।
अलङ्कार परजाय सो बरनत कबि सुख पाय ॥ ३१९ ॥

उदाहरन कबित ।

किसलय छोड़ि कै बसी है आभा पाइन की एहो कबि रघुनाथ कंज सुकुमार में । छोड़ि कै कमल वाली कुचन की सोभा भली आइ कै बसी है चारु श्रीफल उदारमें ॥ कंजन ते छोड़ि मनरंजन बसी है सोभा नैनन को हाल मीन वाझे लाल जाल में । अहि के कुमार तिन्है छोड़ि बसी सोभा सार भाँवती के बार की दुरे-फन के हार में ॥ ३२० ॥

द्वितीय परयाय लच्छन ।

दोहा ।

एक बीच परजाय तहँ कीजे आनि अनेक ।
ताहू सों परजाय सब कबि करि कहत बिबेक ॥३२१॥

उदाहरन कवित्त।

पहिले हो विद्यारथी ब्रह्मचारी भेष फिरि हरि को सनेही भयो भयो साप-हत है। कहै रघुनाथ फेरि आपनो विवाह कै कै भयो गिरहस्त पाइ पाछिले को मत है॥ फेरि भयो परम दरिद्री पुहिमी के बीच फेरि भयो बसुधा बिदित राखें सत है। सामा पाइ बड़ो निजु देसै द्वारिका सों आइ देखौ जू सुदामा ऽब सुरेसै निदरत है॥ ३२२॥

अपरंच कवित्त।

बंसीबटतर नटवर भेष धरें ठाढ़े देखति हौ एई जसुमति के दुलारे हैं। गोधन चरैया एई चोर के हरैया एई गुंजन धरैया एई कुंजन बिहारे हैं॥ एई मन-चोर एई माखन के चोर एई रघुनाथ गोपिन के आंखिन के तारे हैं। एई पीत पट वारे एई हैं मुकुटवारे ब्रज में सुनति हौ सो एई कान्ह कारे हैं॥ ३२३॥

अपरंच कवित्त ।

मालिन ह्वै आवैं काहू दिन पहिरावैं हार नाऊन ह्वै काहू दिन परसत गात हैं । बनि मनिहारी कवौं रीझ की तिहारी वस्तु खोलि खोलि बेंदी मील मिसि बतरात हैं ॥ ऐसो भांति प्रेम सों पगे हैं प्यारे रघुनाथ नित इत आइबे कों केहू ना सकात हैं। जा दिन तें डाठि उनकी हो परी तादिन तें कैया भेषभाषि तुम्हे देखि देखि जात हैं ॥ ३२४ ॥

परिव्रत लच्छन ।

दोहा ।

न्यून देह के लेह जो अधिक सो परिव्रत जानि ।
अलङ्कार में सुरस अति कविजन कहैं बखानि ॥३२५॥

उदाहरण कवित्त ।

टूटी फूटी भीत तापैं सरी गरी छानो परी आँगन मे जमी खरी बासो ऐसे आक का। फटी धोती पेन्हे लटी दुपटी मलीन ओढ़ आया मिलिबे कों रूप छायो महा सोक का ॥ एहो रघुनाथ कवि कहिये कहां लों कथा ऐसो हो

सुदामा द्विज दारिद के थोक की। तीन मूठी भरि चाउ दैं करि चनाउ आपु कीन्हो जदुपति जू सों राज तीनो लोक को ॥ ३२६ ॥

परिसंख्यालङ्कार लछन।

दोहा।

करि निषेध थल एक तें इक थल वस्तु अरोप।
परिसंख्या कबि कहत हैं अलङ्कार गहि चोप ॥३२७॥

उदाहरन कबित्त।

आए जुरि जाचिबे कों जाचक जहां लों रहे एहो कबि रघुनाथ आजु तीनो थर में। एते मान दान तिन्हें भूप दसरथ दीन्हे देत न दिखाई कहूं कोऊ लोभ घर में ॥ बसन के नाते बास पास कौसिला के एक भूषन के नाते नथ नाक छला कर में। घोरे हाथी चित्रन के रहे चित्र सारी मांझ राम के जनम रह्यो दाम दफ्तर में ॥ ३२८ ॥

अपरंच कबित्त।

अतिही कराल कलिकाल की व्यवस्था कहू

एहो कवि रघुनाथ मोपें बात ना कहो। देखिये बिचारि तो अचार रह्यो कुम्भनि में गुरु गरुआई बनिआई हाट में लहो॥ तेलो के सनेह रह्यो नेम गेह बेस्यन के रहो है कसेरन के गेह साँचे का मही। नदिन में पानिप परन तरवनि माहिं बरनो है बन को दरी मैं करनो रहो॥

अपरंच कवित्त।

दूताई दलालनि में मल्लनि में दगड कीबो चीर फार दरजो के बसन बटाई में। अपताई थूहर में चोरताई खटकीरा अनाचार बालक में बन्धन चटाई में॥ महाराज बरिवराडसिंह जू के राज बीच कहै रघुनाथ रहो धूरता नटाई में। पाहन में नीरसता परति देखाई बानि वायु में चवाई रहे कराटक कटाई में॥

विकल्प लच्छन।

दोहा।

बरनत हैं कबिजन जहां तुल बल बीच बिरोध।
तासों कहत बिकल्प सब अलङ्कार कबि बोध॥२२१॥

उदाहरन सवैया।

फागु बिलोकिवे कों रघुनाथ गोपाल को

जो दुचितो बहुते हौ चाहौं चल्यौ तो चलौ चलैं संग चलैं बिनु जानति हौं पछितैहौ ॥ पै इतनी कहें राखति हौं मन मैं न अकेलोई मोद बढ़ैहौ। कै सुख कै दुख पैहौ बलाइ ल्यौं चेत कै आजु अचेत ह्वै ऐहौ ॥ ३३२ ॥

समुच्चय लच्छन।

दोहा।

भाव अनेकनि भांति के एक समै जहँ होइ।
तहां समुच्चय कहत हैं अलङ्कार सब कोइ ॥ ३३३ ॥

उदाहरन सवैया।

कै रतिरंग अनंगहि जीति बिदा रघुनाथ भयो लखि भोरै। आवतो आनद सों उनमत्त लपेटि गह्यो दुपटाहि के छोरै ॥ हार गरे मैं निहारि दुनाम को तीरै करै छमि भाव करोरै। भौंहैं मरोरै निहोरै हँसे झपटै लपटै झझकै झकझोरै ॥ ३३४ ॥

अपरंच सवैया।

खेलति फागु सोहागि भरी वृषभानलली भली भाँति उमंग सों। घूघट ओट किये रघुनाथ

गई हरि पै छकि छूटि के संग सों ॥ चौंकि तिरीछी चितै मुसक्याइ फिरी पिचकारी लगाइ के संग सों। रीझि रहे वह भाव चितै अरु भीजि रहे वा रँगीली के रंग सों॥ ३३५॥

अपरंच सवैया।

आजु श्रीराधे को हौं अपने कर मोहन को लिखि चित्र दिखायो। काढ़ि कछू पटपीत को पेरत ग्वालन सों जमुना में सौंहायो॥ मोद के बोध सों कागद में रघुनाथ भटू जिय वे पथरायो। देखत देखत बार अनेकन बूड़ि गयो फिरि ऊपर आयो॥ ३३६॥

द्वितीय समुच्चय लच्छन।

दोहा।

अहं श्रेष्ठ प्रथमहिं भजे जहां सुनी सुख दान।
ताहि समुच्चय कहत हैं कविकुल ग्रन्थ प्रमान॥३३७॥

उदाहरन कवित्त।

शिव की उपासना की जग्यन की दासना की इन्द्रिनि की सासना की इन्द्र पै अमल की। पूतनि की दूतनि की सम्पति अकूतनि की बर

मजबूतनि को मति भरी-छल को ॥ सत्वनि को मन्त्वनि को महै क्रत जन्तनि को रघुनाथ तपस्या निरंतर के फल को । मेरे है भरोसो आज वाहन के बल को औ दानव के दल को समुद्र याहि थल को ॥ ३३८ ॥

अपरंच कवित्त ।

मेरो यह देह मेरो धन यह मेरो गेह मेरे हो सनेह सदा गोत के रहत हैं । मेरो राज काज मेरो सुभट समाज आजु मेरो ममता कों और भूप को लहत हैं । मै हों महाज्ञानो रघुनाथ मै हों महादानी मेरोही दया सों दीन प्रानी निबहत हैं । ऐसी नित बुद्धि जाकी गात में बसति ताकों सकल सयाने जीव आतमा कहत हैं ॥ ३३९ ॥

कारक दीपक लच्छन ।

दोहा ।

क्रमगति भाव समूह को जहां बरनिये आनि ।
अलङ्कार में सुकवि सो कारक दीपक जानि ॥ ३४० ॥

उदाहरन कवित्त।

बिछवाए पौरि लौं बिछौना जरी बाफ़न के
बरवाए दीपक सुगन्ध सब बारो में। जरवाए
अगर कलस धरवाए रस भरवाए मादक मनिन-
मई झारी में॥ रावरे सों मिलिबे कों एहो
कबि रघुनाथ आवति हौं देखि चोप ऐसी औधि
बारो में। आँगन में आइ ठाढ़ी होइ फेरि फिरि
जाइ फिरि आइ फिरि जाइ बैठ चित्रसारी
में॥ ३४१॥

अपरंच कवित्त।

रूप आस लाग्यो देखि प्यारे। पास ठाढ़ी
प्यारी ताके धन मन करखन के करै उपाय।
भूषन सुधारै छिनु आरसी निहारै छिनु बोरी
लै उछारै छिनु तोरै अंग अँगिराय॥ कहै रघु-
नाथ छिन लाज के नवावै ग्रीव अधर कँपावै
छिन छिन कछू गुननाय। भौंहनि चढ़ाइ छिनु
रहै लखि ललचाइ मुर मुसक्याइ छिनु सखी
सों लपटि जाय॥ ३४२॥

समाधि लच्छन

दोहा।

कारनन्तार ते निकट अपनो कारज होइ।
तासों कहत समाधि सब अलङ्कार सुख भोइ॥ ३४३॥

प्यारो चल्यो परदेस सन्यो मन माल मनोरथ को बहु गूंदें। राख्यो सनेह चहै तेहि औसर लाज समाजु हठे मुँह मूदें॥ है रघुनाथ कहा कहौं भाग की चाह्यो मनोज कछू कियो दूंदें। एते अचानक ही दरसे घन औ बरसे दस बीसक बूंदें॥ ३४४॥

प्रत्यनीक लच्छन।

दोहा।

बली शत्रु के पच्छ पर प्राक्रम बरनन होइ।
प्रत्यनीक तासों कहत कवि आनंद समोइ॥ ३४५॥

उदाहरन सवैया।

प्यार निहारि इहां को पुरातम दीन्हे पठाइ पयोद बली कों। है रघुनाथ कहां लों कहौं वै करैं विधि वर्सोहैं वृष्टि भली कों॥ जानत हौं निसि बासर सात कियो तब जो कारिवे हो

छली कों । रावरे सों तो चली न कछू अब बो-
रत है वृषभान लली कों ॥ ३४६ ॥

अपरंच कवित्त ।

बड़े मधु मधु जो मस्यो है मारि रावरे के
भूत भयो डोलत समाज साज वर सों । एहो
रघुनाथ ताकी त्रास तें पुरुष जोई सोऊ न नि-
कसि होत नेकु न्यारो घर सों ॥ हम अबला औ
वह बूझत तिहारो हित हितू तातें आपने प-
धारि दीन्हे अर सों । ऊधो जू जनाइ दीजो
यह मधुसूदन सों मारी परें ब्रज की बिचारी
मधुकर सों ॥ ३४७ ॥

काव्यार्थापत्ति लच्छन ।

दोहा ।

जहां अर्थ कैमुत्त सों सिद्धि कीजिये आनि ।
काव्यार्थापति कबित में अलङ्कार सो जानि ॥ ३४८ ॥

उदाहरन कवित्त ।

भली-भी जो सीता जू कों लै के दसानन
आपु मिलतो तौ मिलती विभूति औरौ दू
तनी । एहो रघुनाथ रघुनाथ की दोहाई प्रजा

कुसल सों रहती रही तो जाति जितनो । परब खरब जोद्धो दरब सो है है तथा संरव को बर भी जो सेना संग तितनो । पूछ्यो जिन पूर पारा-वार की पहार डार तुतना सुनो हो ताकों लङ्का लेना कितनो ॥ ३४६ ॥

अपरंच कवित्त ।

कब की हौं आई कहि केती समुझाई एक मन में न ल्याई ले बसाई बात छली की । बलि गई चलि प्यारे रघुनाथ पास आस देखत उदास त्रास पायें मैन बली की ॥ हेरि हेरि उर बेर बेर फेरि फेरि नाल चाहो जो हरायो तो सुनो न हाँसी अली की । रावरे कुचनि जो ज्यों कंचन-कलस एहो व्रषभान लली बात केती कौलकली की ॥ ३५० ॥

काव्यलिंग लच्छन ।

दोहा ।

जहँ समर्थनिय अर्थ को हेतु बरनिये आनि ।
काव्यलिंग सब कवि कहत अलङ्कार सुखदानि ॥३५१॥

उदाहरन सवैया।

बाल अनेकनि को लखि हाल जो जीव में

आइ सँदेह बढ्यो है। सो रघुनाथ की सौंह तजौ यह राखि रहौ मन जामें मढ्यो है॥ और न बाम को काम सुनौ निजु तौ ही कों एक बिरंचि गढ्यो है। है करिहै बस मोहन कों चलि तू बलि मोहन मन्त्र पढ्यो है॥ ३५२॥

अर्थान्तरन्यास लच्छन।

दोहा।

पहिले कह्यो विशेष कों फेरि कह्यो सामान्य।
कहि अरथान्तरन्यास को लच्छन है मुख मान्य॥३५३॥

उदाहरन कबित्त।

डारि कै पहार पाटि पारावार भयपार मरकट कटक लै रोक्यन के गन कों। हर बर बंचित कै आदि दै दसानन कों मारि सब राकस जे आगे आए रन कों॥ जोई चाहै साई करै एहो कबि रघुनाथ इतने के बिसमै में कहा डारो मन कों। लङ्का जीति राम जो बिभीषन कों दई कहौ कौन कठिनई है कहत पुरुषन कों॥

दोहा।

पहिले कह्यो सामान्य कों कहिए फेरि विशेष।
यों अर्थान्तरन्यास को दूजो भेद सुभेष॥ ३५५॥

उदाहरन सवैया ।

है रघुनाथ सुनौ मन दै गुन बास किये सतसंग के पास को। छोटे बड़े पद को पहुँचैं जस पावत हैं प्रभुता के अभास को ॥ याकों न मानिये झूठ कछू यह देत कहे निज बुद्धि बिलास को । पान के साथ ह्वै जात लखौ छितिनाथ के हाथ में पात परास को ॥ ३५६ ॥

अपरंच सवैया ।

साधु अगाध मनोग्य के जे तिनके मत ए धन देहु कै लावैं । जो बनि आवै तो कीजै अवस्यक कीन्हे से मोद महा रस चावैं ॥ हे रघुनाथ सुनो सतसंग तें छोटे बड़े पद पावैं सा भावैं । लाह जवाहिर के सँग जाइ महीपन को तिय भाल पैं राखैं ॥ ३५७ ॥

बिकस्वर लच्छन ।

दोहा ।

कहि बिशेष सामान्य कहि कहिये फेरि बिशेष ।
अलङ्कार में सुकवि कहैं ताहि बिकस्वर लेष ॥ ३५८ ॥

उदाहरन सवैया।

इन्द्र कों सामा सुदामा कों कृष्ण दई मि-लतें न गयो पल सेषो । मैं कहौं जो सो सुनौ मन दै इतने कों न आप अपूरब रेखो । रीति ब-ड़ेन की ऐसियै है रघुनाथ कहै उर मैं अवरेखो । अङ्क लगाइ मिले रघुनायक लङ्क बिभीषन कों दई देखो ॥ ३५८ ॥

प्रौढ़ोक्ति लच्छन।

दोहा।

जहँ बरनत उतकर्ष के हेत हेत कोउ आनि।
तहां सुकबि प्रौढ़ोक्ति यह जग में कहत बखानि।

उदाहरण कवित्त।

बेर बेर हेरि हेरि टुचित ह्वै जकि रहौं जो सो मेरे जिय बीच भयो ऐसो भान है । खाली मध्य देश एहो कवि रघुनाथ आपु बिधाता बनायो एतो रावरे के जान है ॥ दूरि कीजे भ्रम सम कछुक है नाही नाही निहचै का कहौं मोहि ईश्वर की आन है । कैसे आवै देखिबे में

तुम हौ सुजान प्यारे प्यारी जू की कटि को नि-
दान परमान है ॥ ३६१ ॥

संभावना लच्छन ।

दोहा ।

ऐसो होइ तौ होइयों करि कै ऐसो अंह ।
अलङ्कार सम्भावना बरनत सुकबि समूह ॥३६२॥

उदाहरन सवैया ।

श्रीरघुनाथ की सौंह सरौं करि भार सह-
स्नि दूध पवावे । वायु बसे सब वाहुन मैं बल
कूरम सेष बराह कौ आवे ॥ और सुनौ यहि
कारन सिद्धि कौं मांगि सदाशिव सौं बर पावे ।
जौ इतना बनि आवे कहूं तौ पिनाकहिं तू दस-
कन्ध उठावे ॥ ३६३ ॥

अपरंच सवैया ।

नील धरे पट प्यारी की आवनि न्हाइ कै
कालिंदी सौं सखि याहूं । सो छबि देखि बि-
चारतो हौं अपने मन में उपमा उतसाहूं ॥ मैं
यह बूझति हौं तुम सौं रघुनाथ की सौंह कहौं

मति आहूं । बारिद बीच क्यौ छिति पै गज-गामिनि दामिनि देखी है काहूं ॥ ३६४ ॥

मिथ्याध्यवसित लच्छन ।

दोहा ।

कोउ एक मिथ्या सिद्धि कों मिथ्या कलपै और ।
मिथ्याध्यवसित होत है अलङ्कार तिहिं ठौर ॥ ३६५ ॥

उदाहरन कवित्त ।

चरते पहार पर देखि फन्द कों लगाइ पीछे सौं चलाइ कर सुख सों बझायो है । गले में जंजीर बाँधि रीछ की तरह सितो लोगनि के आगे ल्याइ उनकों नचायो है ॥ इह सुने की प्रतीति इनकै न जो मै आई रघुनाथ की दोहाई मैं हूं भेद पायो है । तुम जो कह्यो सो साँचइ हमै न झूंठ कछू मेवन के मास को कबाब मैं हू खायो है ।

अपरंच सवैया ।

गावत बाँदर बैठ्यो निकुंज में ताल समेत मैं आंखिन पेखे । तैं जो कह्यो यह सो सुनि के अपने मन में दुख्सां-न रेखे ॥ यामे न झूंठ

कछू रघुनाथ है ब्रह्म सनातन माया को लेखि। गाँव में जाडू वै मेहूं बखानि कों बेलहिं बेद पढ़ावत देखि॥ ३६७॥

ललित लच्छन।

दोहा।

प्रस्तुति के बाक्यार्थ के बरनन को प्रतिबिम्ब।
जहां बरनिये ललित तहँ लखि सोजो बिनु बिम्ब॥

उदाहरन सवैया।

केतिको केतिको बार सिखापन में दियो पै न हिये धरतो हैं। हैं वह नायक श्री रघुनाथ बृथा तिन सों भ्रम के लरतो हैं॥ देखो मनैबे कों मेरे हू तेरे हू आडू के पाइन पें परतो हैं। कौन कथा कहिये इनकी गये फागु को ढांढ़स ए करतो हैं॥ ३६८॥

अपरंच सवैया।

काहू की सीख न मानतो हैं अपने मन आपनी बूझि बसावें। सूधो जो पन्थ सो छोड़ि के ऊबट के बकबाद बृथा उठि धावें॥ है रघु-नाथ कहा कहिये कहतें कछू बातें नहीं बनि

आवैं। देखति हौ इनकी मति कौं ऋतु पावस बीति गये घर आवैं ॥ ३७० ॥

प्रहर्षन लच्छन।

दोहा।

उतकण्ठित जो अर्थ है बिना जतन सौं सिद्धि।
सुकबि प्रहर्षन कहत हैं अलङ्कार में रिद्धि ॥ ३७१ ॥

उदाहरन सवैया।

बासर बासी के तीरथ कौं रघुनाथ सुनी परबी लखि भारी। गाँउ के लोगन संग सखी सिगरो परिवार ले सासु सिधारी ॥ आपु अकेली रही टुलही कहिये अब भाग की बात कहा री। जीव को भावतो देवर जो घर में रह्यो सो घर को रखवारो ॥ ३७२ ॥

द्वितीय प्रहर्षन लच्छन।

दोहा।

जहँ मन वांछित अर्थ सौं अधिक परापति होइ।
दुतिय प्रहर्षन कहत तहँ बुद्धिवान सब कोइ ॥ ३७३ ॥

उदाहरन सवैया।

आजु अन्हात में देख्यो कहूँ मन में मइरैठो

को रूप बसायो । प्रेम-पगी अति आतुर ह्वै घर आतुर एक बंसौठी पठायो ॥ है रघुनाथ कहा कहिये मनमोहन हूं मन मोहन पायो । बातें लगाइ लखालखी की उत सों मिलिबे कों सँदेसोई आयो ॥ ३७४ ॥

तृतीय प्रहर्षन लच्छन ।

दोहा ।

जतन करत जहँ सिद्धि को लाभ होइ साछात ।
कहत प्रहर्षन तीसरो भेद सुमति अवदात ॥ ३७५ ॥

उदाहरन सवैया ।

पाती लिखी अपने कर सों दई है रघुनाथ बोलाइ कै धावन । और कह्यो मुखपाठ यों बेग कृपा करि आइये आवत सावन ॥ भाँति अनेकनि के सनमान कै दै बकसीस पठायो बुलावन । पायो न पौरि लौं जान कहा कहौं बीचही आइ गयो मन-भावन ॥ ३७६ ॥

बिषाद लच्छन ।

दोहा ।

जहँ मनवांछित अर्थ में प्रापति होइ बिरुद्ध ।
तहाँ बिषादहि कहत हैं जे जग में मति-सुद्ध ॥ ३७७ ॥

उदाहरन सवैया ।

मोहन को छवि मोहन रूप दसा ब्रजवासिन को उर आनो । श्री रघुनाथ को सौंह किये कहौं मैं अतिही हिय बीच सकानो ॥ सासुरे माइके को दिसि दृष्टि दै राखिबे कों कितनो अकुलानो । कौन कथा कहिये अपनी सखि लाज निगोड़िहि जातन जानो ॥ ३७८ ॥

अपरंच कवित्त ।

धाम सों निकासि राम बिपिनि पठैये राज बैठे बड़ठैये ठहरायो मति मन में । समै पाइ पाख्या जाइ एहो कबि रघुनाथ केकई जु जानि आपु पति पूरा पन में ॥ हाय कछू बिधि को न गति कहि जाय मोपै देखु देखु सखी भई दोखी सब जन में । यह जो बिचाख्यो सो तो उलटो अरथ भयो मरे दसरथ औ भरथ बसे बन में ॥ ३७९ ॥

उल्लास लच्छन ।

दोहा ।

सो उलास गुन और गुन होत दोष सों दोष ।

गुन सों दूषन दोष तें गुन बिधि चारि सँतोष ॥ ३८० ॥

उदाहरन गुन सों गुन यथा सवैया।

रावरे के बस रावरा भाँवतो. क्यों न रहै अति चातुर लीख्यो। मील सयान सभाई की स्वाद अहो रघुनाथ भले जिन चीख्यो॥ है धन में धनि आजु धरा पर मैं धनि जो तुम्हे आदू के दीख्या। तो सों उमा और रमामे गई बलि चाहैं पतिव्रत को व्रत सीख्यो॥ ३८१॥

दोष ते दोष यथा सवैया।

ठाकुर कूर की संगति सों पहिले बसुधा बिच कूर कहावे। औरघुनाथ को सोंह सुनो मन चाहै सदा धन हाथ न आवे॥ फोको परे अतिहो अँग को रँग है गुन जो सब सो बिसरावे। खोज करे न कोऊ हित मानुष आज को दारिद रोज सतावे॥ ३८२॥

अपरंच सवैया।

कैसी है ढीलो लखौ ब्रज को रघुनाथ कछू गुन जात न गायो। खेलत फागु गली में अचानक आजु गोपाले कहूं गहि पायो॥ कै सुधि

मारी को भी पिचकारी कि बैर लियो एहि भांति सोहायो । जो कछु भायो सो भेष बनायो औ जो मन आयो सो नाच नचायो ॥३८३॥

गुन तें दूषन यथा सवैया ।

बने पंकज से पग पानि मनोहर आनन लों दृग धावतु हैं । रघुनाथ लसैं लगि एड़िन लों कच चन्द सो आनन भावतु हैं ॥ बिधि ऐसो अपूरब रूप रच्यो जेहि तें धनि आपु कहावतु हैं । जौपै देखति हौ न गोविन्द की ओर तौ काम कहो केहिं आवतु हैं ॥ ३८४ ॥

अपरंच कवित्त ।

एरे मृग बड़े दृग तेरे कहै रघुनाथ दूर तक देखौ देख सब से सँकात हौ । बन में बसत बैर काहू सौं न राखत हौ परम नरम पाइ घास पात खात हौ ॥ पाँय को चलाँकी बाँको बसुधा में बिदित है बरनै कहां लौं मानो देह धरें बात हौ । आन पसू तिनमें बड़े हौ सावधान पर तान सुनिबे को बानि याते मारे जात हौ ॥ ३८५ ॥

अथ दोष तें गुन सवैया ।

लोक तिहूंन की पाइ जय श्रिय रावन आपु महा बल भाखो । इन्द्रहि आदिक जे दिगपाल ते जीति के आपनी बंद में डाखो ॥ तासों कह्यो को मिलो रघुनाथ सों मंत्र बिभीषन को न बिचाखो । खिझि दिये को न खेद करो कछू थोरो है तोहि न जीव सों माखो ॥ ३८६ ॥

अपरंच सवैया ।

गुन सों सुगुन दोष दोष सों प्रगट होत परम प्रसिद्ध यह बात है नरन में । रघुनाथ को दो-हाई यह अद्भुत रीति प्रगव्यो सुगुन दोष प्र-गट करन में ॥ जमो मो सों कीन्हो तैसोई मरो चहू सों पायो वैकुंठ पद आपने मरन में । लाग्यो मेरे उर में दसानन चरन सो तो मोहू गुन भयो आयो राम की सरन में ॥३८७॥

अवज्ञा ।

दोहा ।

गुन तें गुन जहं होत नहिं नहीं दोष तें दोष ।
कहत अवज्ञा सुकबि सब अलङ्कार रस पोष ॥ ३८८ ॥

गुन तें नगुन यथा सवैया।

जो शिव के चरणाम्बुज में अपनो मन देइ कछू अनुराग्यो। सो बसुधा बिच ऐसो भयो जेहि को चहुँ चक्रनि में जस पाग्यो ॥ देखो अभाग कलानिधि को रघुनाथ सुनौ चढ़ि सीस पैं आग्यो। जैसे का तैसो कलङ्क रह्यो रहि संगति को गुन नेकु न लाग्यो ॥ ३८९ ॥

दोष तें न दोष यथा सवैया।

जाति नहीं प्रभुता रघुनाथ जौ सेवरे मान्यो न देव धुनी कों। मोल घटै नहिँ पामर बाहू के जौ कहूं देत है फेंकि चुनी कों ॥ मंली परै नहिं मान कछू जौ हँस्यो कोऊ पातकी देखि मुनी कों। ठाकुर कूर किया जौ न आदर लागत है नहिँ दोष गुनी कों ॥ ३९० ॥

अनुग्या लच्छन।

दोहा।

इच्छा की जत दोष की जहां बड़ो गुन पाइ।
तहां अनुग्या कवित में कविजन देत दखाइ ॥ ३९१ ॥

उदाहरन कवित्त।

जोइ कहैं सोइ सुनि ऐहैं रघुनाथ औसर कुऔसर की बात सब सहिये। मागिये न खाइबे कों और कोऊ परकार करत कलेऊ में जो झूठो मीठो लहिये॥ घर की टहल जेती तेती सब आनद सों करिये उदास भाव कबहूं न गहिये। मोहन के देखिबे को मन में बसी है आइ जाइ जसुमति जू को चेरी ह्वै कै रहिये॥

लेसालङ्कार लच्छन।

दोहा।

जहां जात गुन दोष ह्वै दोष जहां गुन होत।
अलङ्कार में कहत हैं लेस सुकबि के गोत॥ ३८३॥

गुन दोष ह्वैबो लच्छन।

औलौं चले सुनि कै जिय तौ लगि मैर चढ्यो बिस ऐसे पिये को। सूख्यो करै तन भूल्यो फिरै मन काम तज्यो नहिं काम जिए को॥ सौंरे करेजे कितोक सकै सुख है रघुनाथ बिहार किए को। देखौ हमै मधुसूदन को यह नेह भयो नटसाल हिये को॥ ३८४॥

दोष गुन ह्वैबो यथा सवैया।

दूबरो ह्वैबो सो दोष महा जग में परसिद्धि सो बात रची है। मोहितो जानि परै है महा गुन मानो हिये यह जानो सची है॥ रावरे के बिछुरे रघुनाथ बढ़े बिरहा सों जो देह पची है। हेरे न पावत घेरे है आज लौं काल के हाथ सों बाल बची है॥ ३८५॥

अपरंच कवित्त।

दान सनमान पाइ आठ हू दिसा में जाइ गावत हैं गुनी फैले राजनि के थोक में। भारी दल भार कौं सँभारि साहिबी सराहि गावत हैं सेष राखि चित छितिरोक में॥ कहै रघुनाथ बरिवण्डसिंह महाराज तुम सो को दूजो आजु पुनीती के थोक में। मारे जेहैं वीर तिन्है बरिता सों सुख पाइ गावती हैं जस अपसरा सुरलोक में॥ ३८६॥

मुद्रा अलङ्कार लच्छन।

दोहा।

सूच्यार्थं को सूचिबो सो मुद्रा पहिचानि।
अलङ्कार में सुकवि सब बरनत सुनो सुजान॥ १८०॥

उदाहरन सवैया।

कालिंदी कूल कदंब की छांह में ठाढ़ोही आपु सखोन सों लेखी। औरै अपूरब सोभा भई रघुनाथ उदास के भाव सों भेखी॥ खेद सुखावति कंज लिये कर आंखैं किये जनु चित्र को लेखी। है तुम कों सुधि एहो गोपाल अहीर की जो वह आदिन देखी॥ ३९८॥

रत्नावली लच्छन।

दोहा।

क्रम सों बरनन कीजिये प्रकृति अर्थ जेहिं ठौर।
अलङ्कार रत्नावली बरनत कबि सिर मौर॥ ३९९॥

उदाहरन सवैया।

आदित सोम कहौ कबहूं कबहूं कहौ मङ्गल औ बुध होते। बीफै शुक्र शनीचर को कहिबो कबहूं मुख सो नहिं रोते॥ मोहि न जानि परै रघुनाथहि भेट को है दिन कौन सो बीते। आवत जात में हारि परो तुम्हैं बार बतावत बासर बीते॥ ४००॥

अपरंच सवैया ।

केसरि सों पहिले उबव्यो अँगरंग लख्यो जिमि चंपकली है । फेरि गुलाब के नीर न्हवाय पिन्हायो जो सारी सुगन्ध रली है ॥ नाइनिया चतुराइनि सों रघुनाथ कियो बस गोप-लली है । पारत पाटी कह्यो फिरि यों ब्रजराज सों आजु मिलो तो भली है ॥ ४०१ ॥

अपरंच कवित्त ।

सोंह कीन्हे कहति हों एहो प्यारे रघुनाथ आवति रखांये वाहो उनहीं के घर सों । जैसे बनै तैसे द्योस आज को बिताइये जू अब अ-कुलाइए ना पागे प्रेम बर सों ॥ जापर गुलाल मूठी डारी सो मिलेगी काल्हि मारी पिचकारी बाल प्यारी तो न पर सों ॥ खेलत में होरी रावरे के कर बर सों जो भीजिही अतर सों सो आइ है अतर सों ॥ ४०२ ॥

अपरंच कवित्त ।

सत्यजुग पुष्कर औ चेता बीच कुरखेत हा-

घर के अंत नीमखार बन्यो जब सों। कहै रघु-नाथ इन तीन को जगत बीच परम प्रसिद्ध नाऊँ चल्यो आयो तब सों ॥ भूप बरिबण्ड कलऊ में बनवायो शिवसागर तलाव सो स-रस बन्यो सब सों। यह जानि परै देखि महत महातिम के गने जैहैं चारि चारौं जुगन के अब सों ॥ ४०३ ॥

तद्गुन लच्छन ॥

दोहा।

तजि अपनो गुन और को गहै सो तद्गुन जानि।
अलङ्कार में सुखद अति कविजन कहैं बखानि ॥

उदाहरन सवैया।

सोन जुही की है जाति है माल बनाइ कै माल किती पहिराइये। मोती के भूषन भूषिये जे पुखराज के ते सिगरे कहि गाइये ॥ जोबन आवत लाली सरीर में है रघुनाथ कहां लौं ब-ताइये। खौरि लगाइये चन्दन की अँग के सँग केसरि को रँग पाइये ॥ ४०५ ॥

अपरंच सवैया।

आसन एक पैं आनँद सों पिये आपुस में रस रूप बिसाल को। मैं रघुनाथ गई तेहिँ औसर डाल लिये कर फूल की माल को॥ रीझि रही दुति देखि दुहूं की औ कौतुक एक भटू एहिँ हाल को। अंग के रंग सों अंग को रंगभो गोरो को साँवरो गोरो गोपाल को॥ ४०६॥

अपरंच कवित्त।

आवति हौं देखे एक कौतुक सो यों सो सुनो आजु लौं न ऐसे और आँखिन में परे हैं। कबि चाहैं बरन्यो तो बरन्यो न जाइ लिख्यो चाहै लिख्यो जाइ न चितेरे जेऊ खरे हैं॥ अंग अंग अंग रंग प्रभा सों अभेद भए कहै कबि रघुनाथ ऐसो रूप धरे हैं। राधा माधो सोहै सोहैं सहज सुभाव खरे मोहि जानि परे दोऊ लीला हाव करे हैं॥ ४०७॥

अपरंच कवित्त।

कौतुक है एक चले तू हूं तो देखाऊँ तोहि

आवति हौं देखे अबे देखिबे को दांवरी। सौंहें कीहे कहति हौं समें न मिलैगी फेरि बसि बृन्दाबन बरसन दौन्हे भाँवरी ॥ कदम कौ काहौं दोऊ दौन्हे गरबाहीं खरे जमुना में फूलत सरोज जेहि ठाँव रीं। भासत हैं ऐसे बिनु बाधा एहो रघुनाथ आधा हरि गोरे आपु आधा राधा साँवरो ॥ ४०८ ॥

अपरंच कबित्त।

श्रीगोपाललाल जू सों मिलबे कों महरेटी गई निकुंजन बोच पालपन मन को। इतनो उद्दोत तहां कोन्हो एहो रघुनाथ मुख के प्रकास औ सुबास वाके तन को ॥ चितये चकोर चारों ओर तें निकट आइ रहे टक लाइ पाइ मोद लोचनन कों। कहिये कहां लौं एक राति में बिहारे सुनौ सौरभित ह्वै गयो बिटप सारे बन को ॥ ४०९ ॥

अनगुन लच्छन।

दोहा।

प्राक सिद्धि गुन को जहां पर संनिधि उतकर्ष।
अलङ्कार अन गुन तहां जानो महि हिय हर्ष ॥ ४१० ॥

उदाहरन सवैया।

चोप भरे रघुनाथ विलोकत दम्पति जोन्ह की जोति रसीली। एही सखी तेहिं औसर लै गई में रचि फूल को माल छबीली॥ आनन की दुति देखी दुहून की फैलि रही इतनो नभ मीलो। चैत के पून्यो को चन्द की चाँदनी चौगुनी चारु भई चटकीली॥ ४११॥

अपरंच कवित्त।

सौरभ सकल डारि सुमन सों गूंदे बार भूषन मनिन वारे माँग मुकता भई। हीरन के धारे हारु चन्दन चढ़ाएँ चारु सुरसरि ताकी धार सुरसरि तारई। रघुनाथ पिय बस करिबे कों चली बाल मुख की मरीचो जाल दिसि मढ़ि कै लई। चाव चढ़े चखनि चकोरन के चका चौंधी चंद्र गयो चपि चटकीली चाँदनी भई॥ ४१२॥

अपरंच कवित्त।

जहां होत हन तहां संनकी उपजएती रेत

में तें चौगुनो बढ़त समै दाँव तें । अनगने घर ऐसे नर उपजे हैं ते हैं आठ हू दिसनि में बि-दिति ऊँचे नाज तें ॥ कहै रघुनाथ बरिवण्ड-सिंह महाराज एती बरकति भूमि रावरे के पाँउँ तें । ठौर ठौर सर भए पानिप सों भरे भए गाउँ भये बन तें नगर भए गाउँ तें ॥ ४१३ ॥

मीलित लच्छन ।

दोहा ।

जहां सदृस ते भेद कछु नहीं परत पहिचानि ।
अलङ्कार मीलित तहां कबिजन कहत बखानि ॥४१४॥

उदाहरन सवैया ।

आजु उरोजन पैं गुन गौरि के मैं अपने कर केसरि लाई । सोन जुही की बनाइ कै माल बिसाल बिचित्र गरे पहिराई । हे रघुनाथ कहां लों कहौं लखि कै अँग के रँग की अधिकाई । कै गरगाप दई दुति में दुति दूसरी देखिबे में नहिँ आई ॥ ४१५ ॥

सामान्य लच्छन।

दोहा।

जहां नहीं सामान्य तें लच्छित होत विशेष।

अलङ्कार सामान्य है तहां अपूरब भेष॥ ४१६॥

उदाहरन कवित्त।

पायो भेद सखिन सों सोवति अकेली आपु प्रथम समागम के भरी भय भारी में। रघुनाथ चल्यो तहां जागी पाइ आहट कों ठाढ़ी भई भागि लागि भीतर अटारी में॥ कहा कहों कौतुक कह्यो न मोपें जात कछू अब लों न देख्यों रूप ऐसो और नारी में। चित्रन सों मिलि भइ चित्र हाथ में न आई हारो हेरि प्यारो रही प्यारी चित्रसारी में॥ ४१७॥

उन मीलित लच्छन।

दोहा।

जहँ भेद अस्फुर्त है सो उन मीलित जानि।

जहँ विशेष अस्फुर्त है सो वेसेष बखानि॥ ४१८॥

उदाहरन सवैया।

देखिबे कों दुति पून्यो के चंद की है रघुनाथ श्रीराधिका रानी। आइ बेलौर के चौतरा

ऊपर ठाढ़ी भई सुख सौरभ सानो ॥ ऐसी गई मिलि जोन्ह की जोति सों रूप को रासि न जाति बखानो। बारन तें कछु भौंहन तें कछु नैननि को छबि तें पहिचानो।

वैसेष उदाहरन।

खेलत खेल मिहींचिनी को चित्रसारी में आइ रुपी छबि छाई। चित्र लिखी पुतरीन सों न्यारी कै है रघुनाथ गई नवताई ॥ हेरत हारी सखी सिगरी अपनी अपनी करि कै चतुराई। द्योस में आई न हाथ कहा कहौं राति भई तब राधि कै पाई ॥ ४२० ॥

अपरंच सवैया।

बाँधे सनाह तुरंगन पैं चढ़े भेष भयानक भावत जोत हैं। देखत देखि परैं एहि भांतिहिँ हिम्मति किम्मति के बड़े पोत हैं ॥ फौजन बीच अभेद सदा रघुनाथ कहै दोउ कीन्हे उदोत हैं। ह्वै सुन माहिर जंगजुरे पर सूर वा कायर जाहिर होत हैं ॥ ४२१ ॥

गूढ़ोत्तर लच्छन ।

दोहा ।

चतुराई लीन्हे जहां उत्तर बरनन होइ ।
गूढ़ोत्तर कवि कहत हैं अलङ्कार सुख भोइ ॥ ४२२ ॥

उदाहरन सवैया ।

गाउँ में चोरन को डरु है रहै पावत कोऊ न काहू दुआरे । और सुनो रघुनाथ इहां यह रीति लगे न पुकार पुकारे ॥ मागत हौ बसिबे कों जो ठौर तौ जाइ बसौ अबहीं उजिआरे । बाखरी एक हमारी है सूनो सो है खिरकी सो लगी पिछवारे ॥ ४२३ ॥

चित्रोत्तर लच्छन ।

दोहा ।

प्रश्नोत्तर सो सौं बरनिये जहां न उत्तर भिन्न ।
चित्रोत्तर सो कहत हैं अलङ्कार परबिन्न ॥ ४२४ ॥

उदाहरन सवैया ।

आवौ तौ बैठो सुनो कछु राग सिखावत में सब गावति हैं जो । जाहु तौ जाहु जौ देखत हैं मग श्रीरघुनाथ महा दुचिते हो ॥ मेरो सखी

परिमान कहै तुलसी बसुधा मैं कहावति है को । उत्तर है यह यौं कहियो तुम जो पठई हम कौं पहुंची सो ॥४२५ ॥

अपरंच सवैया ।

रघुनाथ हो आजु मिल्यो पटु एक सो विद्या बृहस्पति सो दरसै । पढ़ते औ पढ़ावते एक घरी कबहूं मन बीच नहीं अरसै ॥ महिमा मति को कहि जात कछू नहिं ऐसी सुनो तेहि कौं सरसै । दियो उत्तर प्रश्नहि में सहजै तन अंत समैं जमुना परसै ॥ ४२६ ॥

सूक्षम लच्छन ।

दोहा ।

तुरते आसै और को अपने जिय में जानि ।
व्यंग सहित चेष्टा करै सूक्षम ताहि बखानि ॥ ४२७ ॥

उदाहरन सवैया ।

आई हौं बूझन तो सों सखी एहिं बात को हेत कहा है सो भाखौ । मेरे महा मन में भ्रम है रघुनाथ की सौंह सो दूरि कै नाखौ ॥ राधे पैं कांधे पठे हरदी अलि सों कहियो एहि को

रस चाखौ। हाथ में ले फिरि हाथ में दे कह्यो जाइ कहौ तुमहूं यह राखौ ॥ ४२८ ॥

पिहित लच्छन।

दोहा।

जहां जानि वृत्तान्त पर चेष्टा करे सकूत।
अलङ्कार पोहित तहां बरनत कवि मजबूत ॥ ४२९ ॥

उदाहरन सवैया।

आयौ कहूं रति मानि के भाव तो हेर हसों रद की छद टूखे। पीक की लीक कपोलनि सों रघुनाथ लगो रँग ह्वै रहे रूखे॥ लागी प्रस्वेद के भीजे जँवागे सो जैसे के तैसे लखे नहिं सूखे। ले तेंहिं काल अभूषन अंग में हीरा बिसाल के भूषित भूखे॥ ४३० ॥

व्याजोक्ति लच्छन।

दोहा।

अलङ्कार व्याजोक्ति तहां बरनत कवि एहिं रीति।
गोपन करे आकार कौं जहां और के भौति ॥ ४३१ ॥

अपरंच सवैया।

फूलीहि मालती बागन बाजू के चाहत धाइ मगाइ सो भेखो। मोहि पठाई ले आ-

दूबे कों वह आजु महा हठही अब देखो ॥ हे रघुनाथ कहा कहौं औरं को जानही मेरो कियो यह लेखो । आंठ में काटि उरोज पै आयो मै भारत लाग्यो खरोंट सो देखो ॥ ४३२ ॥

गूढ़ोक्ति लच्छन ।

औरे प्रति उद्देश करि कहै और सों बात ।
तासों कबि गूढ़ोक्ति कहि बरनत अति अवदात ॥४३३॥

उदाहरन कबित्त ।

राधिके बिलोकि एहो कबि रघुनाथ ठाढ़ो जमुना के तट गुरजन के सँघट में । आसे राखि जिय में मुनादूबे कों उतैं दूतैं सखी प्रति सखा एक बोल्यो बुद्धि पट में ॥ जानिये न कौन हेतु मोहन सखा सों कह्यो तुम सब रहौ जाइ गोध नगरट में । मिलि हैं प्रभात बृन्दावन बीच ऐयो हम आजु राति बसि हैं अकेले बंसीबट में ॥ ४३४ ॥

बिव्रतोक्ति लच्छन ।

दोहा ।

व्यंग सहित श्लेस अर्थ बरनत कबि सुखदानि ।
अलङ्कार बिव्रतोक्ति तहँ होत लेहु पहिचानि ॥ ४३५ ॥

उदाहरन सवैया।

हार सँवारि अनेकन फूल के आई लै मालिनि भौंन भरे में। काहू कों खेत दियो कोहिं काहूं कों पीरो दियो रघुनाथ अरेमे॥ नीरज नील को ले करमें कही राधे सों यों चतुराई धरे में। लीजिये हेत तिहारे हौं ल्याई हौं या रँग को लगे प्यारो गरे में॥ ४३६॥

अपरंच सवैया।

मैं गथ लाइ करोरिन गाँठि कै कीन्ही बनाइत यार पतीजे। देखि कै रीझिये जो रिझवार हौ दीजिये साहब दारिद छीजे॥ हे रघुनाथ हैं वा हो कछू नहिं चित्त कों नेक दुचित्त न कीजे। चाहत जोई बनाव को सोई घरी पल में पहुँचो अब लीजे॥ ४३७॥

अपरंच सवैया।

देखिये सूधे चुनौतिय में शुभ राख्यो है मैं केहिं भाति सँवारे। चारु सुगन्ध की खानि कथा कहिये रघुनाथ महा गुन धारे॥ चाहत जैसिये

तसिये लाई हौं स्वच्छ सु प्यारी जू हेत तिहारे। कीजिये लाल कृपा इतही नित लीजिये आनि के पान हमारे ॥ ४३८ ॥

अपरंच सवैया।

जो कोउ देइ सो सो कोउ लेइ याहि व्यवहार बड़े को चलायो। मैं अपने जिय में यह जानि दियो तुम कों अपनो मन भाय ॥ रावरे को गुन मोपै कछू रघुनाथ को सौंहन जातु है गायो। भाउ बरोबरि को तो कहा अजौ देखिबे कों फिरि पाउ न पायो ॥ ४३९ ॥

जुक्ति लच्छन।

। दोहा

परसों गोपन करि क्रिया करै जुक्ति सो जानि।
अलङ्कार में अति सुरस सुकबिन कों सुखदानि ॥४४०॥

उदाहरन सवैया।

देख्यो परोसिन भेय्यो गुपाल सों है रघुनाथ हिये गरबाही। धाय पै आंय सो आहति है कह्यो बूझि डरी अपने मन माहीं ॥ ताके निवारिबे कों तिहिं कालयों बुद्धि प्रकास कियो

छिय राहीं । पीठ दियाहि दै आपने सीस को पाय सों लाय रही पर छाहीं ॥ ४४१ ॥

अथ लोकोक्ति ।

दोहा ।

जहँ कहनावति लोक की तहँ लोकोक्ति बखान ।
अलङ्कार में सरस अति सुकबिन कों सुखदान ॥४४२॥

उदाहरन सवैया ।

कीजिये दूरि मैं मागति हौं अपने मन मैं तें उदास को होनो। रावरे रूप सों रूप बिरंचि बनाइ सक्यो न रह्यो गहि कोनो ॥ जो रति की समता रघुनाथ दई तुम कों मति को अति लोनो । तोले तुला धरि होत कहा बलि गुंज सो गुंज औ सोनो सो सोनो ॥ ४४३ ॥

अपरंच लच्छन ।

गोपन में रघुनाथ गोपाल कहावत आपु हे बुधि के पूरे । जानि परे नहिँ कौन दसा भई आवति है मन मैं न बिसूरे ॥ छोड़ें तौ राधिका सी ठकुराइनि राखें तौ कूबरी प्रेम के कूरे ।

साँचो कियो उपखान सुनौ तजि राजसिंघासन बैठत धूरे ॥ ४४४ ॥

छेकोक्ति लच्छन।

दोहा।

अरथांतर की कलपना जहँ लोकोक्ति में होइ।
अलङ्कार छेकोक्ति सो बरनत कबि सुख भोइ ॥ ४४५ ॥

उदाहरन सवैया।

हौ सबही सों बड़ो तुम हौ हितु औ मन मोहन सों ले मिलाइये। ए महबासिनि हैं तो कहा इन सों जौन कारज सिद्धि कै पाइये ॥ है जग में उपखान प्रसिद्ध सुनौ रघुनाथ कौ सोंहँ सुनाइये। ब्रछ सोई है जहां फल खाइये सिन्धु सोई है जहां जल पाइये ॥ ४४६ ॥

अपरंच सवैया।

लख्यो अपनो अँखियान सों मैं जमुना तट आजु अन्हात में भोर। लगे हग रावरे सों उनके लगे रावरे के उनके मुख ओर ॥ दुरावति हौ सहबासिनि सों रघुनाथ वृथा बतियान के ओर।

सुनौ जग में उपखान प्रसिद्ध है चोरन की गति जानत चोर ॥ ४४७ ॥

बक्रोक्ति लच्छन ।

दोहा ।

जहँ परार्थ की कल्पना स्लेस काकु ते होत ।
बरनत तहँ बक्रोक्ति कहि अलङ्कार मति पोत ॥४४८॥

उदाहरन सवैया

पौरि में आपु खरे हरि हैं बस है न काहू हरि हैं तो हरैबे । वेसुनौ को वे कौं हैं बिनतौ सुनौ हैं बिनतो तिय को जबरैबे ॥ टौबे कों लाए हैं माल तुम्हे रघुनाथ ले आए हैं माल खरैबे । छोड़िये मान वे पाप करें कहैं पाप करे कहैं चोसि करैबे ॥ ४४९ ॥

काकु यथा सवैया ।

बातें लगाइ सखानि सों न्यारो के आजु गह्यो ब्रखभान'किसोरी । कैसरि सों तन मंजन कै दियो अंजन आँखिन में बरजोरी। हे रघुनाथ कहा कहौं कौतुक प्यारे गोपालै बनाइ कै

गोरी। छाड़ि दिया इतनौं कहि कै बहुरो इत आइयौ खेलन होरी ॥ ४५० ॥

अपरंच सवैया।

होत बेलंब चलौ घर कौं हरि देखिये द्योष के जाम गए है। देखें बिना मग हेरत ह्वैहिगी गेह के लोग महा दुचिते ह्वै ॥ ह्वै बस लोभ के हे रघुनाथ रहे हौ कहा एहि आसरे में भ्वै। कैसे कै आइ हैं गोरस लै गुन रावरे कै नहिँ जानति हैं वे ॥ ४५१ ॥

सुभावोक्ति लच्छन।

दोहा।

कीजे जहां कबित्त में बरनन जाति सुभाव।
सुभावोक्ति सो जानिये अलङ्कार गहिचाव ॥ ४५२ ॥

उदाहरन सवैया।

कैसी है ढीठि लखौ यह गोप की चोपभरी सिगरी ब्रजबाल सौं। काहू कौ कानिन मानति है हठ ठानति है चपला पन चाल सौं॥ मारि गई तब कै बढ़ि कै रघुनाथ घुमाइ कै फूल कौ

माल सौं । लाल की फेंट सों लैकै गुलाल लपेटि गई अब लाल के गाल सौं ॥ ४५३ ॥

अपरंच सवैया ।

खेलत फागु लखि पिय प्यारी कों सो सुख की समता कहा दीजै । देखतही बनि आयो समै रघुनाथ कहा है जो बार ने कीजै ॥ ज्यों ज्यों छबीलो कहै पिचकारी लै एक लई अरु दूसरी लीजै । त्यों त्यों छबीलो छकै छवि छाक सों हेरै हँसे न टरै खरी भीजै ॥ ४५४ ॥

अपरंच सवैया ।

जात चली एक गोपललो लखि मोहन औसर बूझि कै होली । केसरि सों भरि के रघुनाथ छिपाइ लई पिचकारी अमोली ॥ पाइ दबे बढ़ि पीछे तें आगे ह्वै लाइ दई एहि भांति ते भोली । ऊँचे उरोजन ऊपर धार सराक दै लागी छराक दै बोली ॥ ४५५ ॥

अपरंच कवित्त ।

और ठौर औरे हैं जो नन्द के मंदिर आइ

आजु तू रही है परि बातन के सकरें। देखि देखि मुख को समूह सोभा रघुनाथ बालपन चरित गोपाल जो अब करें॥ पाइन हनत भूमि घुंघुरू बजत ताकों निरखैं न बाँधे नैन पलक न जकरें। दुहू दतियन जोरि बंदन हँसौं हौं वारि झूमै ठाढ़ो आँचर जसोमति को पकरें॥

अपरंच कवित्त।

कहूं सूधी कहूं टेढ़ी कहूं फन सों लपेटी लहरी उठत ऊँची कहूं नीची पथी को। कहूं अति तेज कहूं सीतल उथल कहूं कहूं ह्वै गम्भीर रही कहूं कूल मथी को॥ कहूं अति तरजति गरजति मंद कहूं कहै रघुनाथ कहूं माधुरता गथी को। हर की जटा सों छूटि ऐसी भांति पथ चली भगीरथ रथ पीछे धार भागीरथी को॥ ४५७॥

अपरंच सवैया॥

बाहुबली बरिवण्ड बहादुर भूप सदा प्रभु के गुन सौंरे। देत निहालत लच्छन के जन जो कोऊ जाचन आवत पौरे॥ बीर सुभाव लिये

रघुनाथ भयो रन बावर है चित चौरै । ठौर कुठौर करै नहिं गौर जहां सुनै फौज तहां उठि दौरै ॥ ४५८ ॥

भाविक लच्छन ।

दोहा ।

भावी भूत जहां सुकवि बरनत हैं साछात ।
अलङ्कार भाविक तहां होत परम अवदात ॥ ४५९ ॥

उदाहरण सवैया ।

सावनी तीज की साँझ सुहावनी बैठीही औरै मिली सखियान में । आनन ओप कलानिधि की दृग में चपलापन ज्यों झषियान में ॥ रीझि रही लखि हौं रघुनाथ न भूलति केहूं खुभी अखियान में । झूलति है वह झूलन हारि अजौं जिय में हिय में अँखियान में ॥ ४६० ॥

उदात्त लच्छन ।

दोहा ।

श्लाघ्य चरित रिधि को चरित अन्यो पलच्छित होत ।
अलङ्कार उदात्त सो बरनत हैं मति पोत ॥ ४६१ ॥

श्लाघ्य उदाहरन सवैया ।

जाको सभा महँ दान देव हैं दोऊ पै काहू

पैं कोऊ न को है। पौन पुरन्दर वासौ खरे औ खरो अम दृष्टि कृपामई जो है॥ हे रघुनाथ तिहूं पुर को धन बाहुन के बल आने हरो है। शंकर को सिख नाती पुलस्त्य को भेष भयावन रावन सो है॥ ४६२॥

अपरंच सवैया।

जाको लिये मनमोहन मोहन मन्त्र सिख्यो जेहिं तें मन मोहै। जाको दरीचो के नीचे खरे रहैं जीव में राखि कदाचित जो हैं॥ पाइ परैं रघुनाथ इहा करैं जाको लखे अँखियान में को है। दिव्य सुभाइनि की सुनिये ब्रज की ठकुराइनि राधिका सो है॥ ४६३॥

रुधि चरित्र यथा सवैया।

तीनिहूं लोकन में जितने तितने जुरि आये बधाई के लीन्हे। जैसे को तैसो कहां लों कहौं सब के मन माफिक आदर कीन्हे॥ हे रघुनाथ भये रघुनाथ के आनँद में इतनो धन दीन्हे। आजु सभा बिच श्रीदसरथ्थ की भिच्छुक भूप बनाइ के दीन्हे॥ ४६४॥

अपरंच कवित्त।

गज गजसारनि में तुरग तबेले बँधे सुतर सुतरखाने ताजे हिय हितए । सब दिन सेवत सुभट लागे संग जे न जंग जुरे भीति खाँहि तोपन के भितए ॥ कहैं रघुनाथ कीन्हे कमला अवास बास सब सुख लीन्हे पास आधि व्याधि बितए । कौन के न भए और कौन के न ह्वैहैं ऐसे भूप वरिवगड की कृपा को कोरचितए ॥ ४६५ ॥

अत्युक्ति लच्छन।

दोहा।

जहँ उदारता सूरता अदभुत सहित अतथ्य ।
बरनत कवि अत्युक्ति सो अलङ्कार समरथ्थ ॥ ४६६ ॥

उदाहरन सवैया।

नीकी अनैसी सो जानती हौ सब है न छपी जितहो यह हेरी । बाते सिखापन की कहिये कहा जद्यपि है हिय एक है घेरी ॥ रावरी बुद्धि को देखि दसा रघुनाथ की सौंह सुनौ मति मेरी । ऐसो परै निजु जानि बलाइ ल्यौं

है गुरु तू गिरा सिष्यिनि तेरी ॥ ४६७ ॥

शौर्य वर्नन अत्युक्ति यथा कवित्त ।

छोड़े धाम दाम वाम काम कौ सो गैलनि में अंगनि ते छाम भए भारी सोच वस तें । मं-दरनि कंदरनि अंदरनि वसे महा विपदा में फँसे असे भयानक रस तें ॥ ऐसो दसा उनकी है ऐहो कवि रघुनाथ समर के भागे को दुरित ताते गस तें । द्योस में प्रतापागिनि लागे वैरी वरि जात राति जीवैं रावरे अमृतमयी जस तें ॥ ४६८ ॥

प्रेमात्युक्ति उदाहरण सवैया ।

जाइ दियो उनके कर सों प्रभु जो लिखि आपुन मोहि दयो तो । और सँदेसो कछू मुख पाठ सो उहित हों करिबे कों भयो तो ॥ एते में गोपिनि के अँसुआ रघुनाथ चले रथ घेरि लियो तो । कौन कथा कहिये उनकी प्रभु भा-गिन आऊँ तौ बूड़ि गयो तो ॥ ४३९ ॥

अपरंच कवित्त ।

जहां जहां सुने तहां तहां को पठावे मोहि

देखि आउ अबहीं सरूप कैसो धरे हैं । देखि आई जहां तहां फूलि फूलि भूलि भूलि बूझति बनक ऐसे निति नेम करे हैं ॥ कहा कहौं तोहि कहि आई जो तूं हरिकथा मोहि ए चँदेसे रघुनाथ आनि अरे हैं । आँखि में परैंगे आइ जो तो कौन दसा ह्वै कान परे प्रान राखिबे के लाले परे हैं ॥ ४७० ॥

निरुक्ति लच्छन ।

दोहा ।

जहां नाम के जोग तें अर्थ प्रकल्पन और ।
अलङ्कार निरुक्ति सो बरनत कबि सिरमौर ॥ ४७१ ॥

उदाहरन सवैया ।

भोरहि तें बस बारुनी के ह्वै छिपे सब द्योस एकै तलए हो । साँझ भए प्रगटो तो सरोज सहोदर को मन मोद हए हो ॥ बैलो सी बाल-बियोगिनि पै रघुनाथ कहै रबि से ह्वै तए हो । ऐसो करो कत जो तुम तो बसुधा में सुधाकर ख्यात भए हो ॥ ४७२ ॥

अपरंच सवैया।

संकर बीच बसी बरुना के बसाई पुरी अपनी सुखरासी। ताके सराहिबे कों तिहूं लोक के आए सबै जुरि बुद्धिबिलासी॥ कासी है आपुस में समता कों कह्यो रघुनाथ यों देखि महामी। पायो नहीं तब नांव धर्यो यह कासी कही तौ कहीं एहिं कासी॥ ४७३॥

प्रतिषेध लच्छन।

दोहा।

जहां प्रसिद्ध निषेध को अनुकीर्तन है आइ।
प्रतिषेधालङ्कार तहँ बरनत बुधि उदाइ॥ ४७४॥

उदाहरन सवैया।

गाउँ के लोगन की यह रीति अवाइनि तें सब देस मढ़ायो। गेह के अं रिसि में भरे ते मिसि कोज के आईं चिता पै चढ़ायो॥ हे रघुनाथ कहा कहिये तुम सो अब चाहत जोग पढ़ायो। ऊधो सुनौ मनमोहन सौं हम प्रीति कियो नहिं ब्याधि बढ़ायो॥ ४७५॥

अपरंच सवैया ।

मैं तुम सों कहि राखति हौं तुमे मेरी कही के विचार में जीवो । जन्त्रनि मन्त्रनि के उपचार में है रघुनाथ सदा मन दीवो ॥ वै ठकुराइनि राधिका हैं अति दुस्तर है उनको मन जीवो । एहो गोपाल न बूझो हिये यह ग्वालि गँवारिनि को बस कीवो ॥ ४७६ ॥

अपरंच सवैया ।

देखि अपूरब रीति हिये पुलके हो कहा अति आनँद कीन्हो । मै इतनी कहि राखति हौं अपनी जो कछू मति आगम चीन्हो ॥ गोपन ले रघुनाथ गोपाल गोवर्द्धन को नहिँ पूजन कीन्हो । बोरिबे को ब्रज बैर को इन्द्रहि आजु बयानो बरब्बस दीन्हो ॥ ४७७ ॥

विधि अलङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

सिद्धि वस्तु को बरनिये जहां बिधान विचारि ।
विधिसु अलङ्कृत सुकबि तहँ बरनत अति मति धारि ॥

उदाहरन सवैया ।

बात लगे नहिँ पोथिन की जुरि बैठ्यो गँ-

बारनि को जहँ गोत है । सीख्यो है जो सब सो बिसरै मन में मति को नहिं होत उदोत है। हे रघुनाथ सुनो निहचै यह मैं कहिबे में कियो नहिं भोत है । मण्डित बुद्धि के लोगन की सभा पाए तें पण्डित मण्डित होत है ॥

हेतु अलङ्कार लच्छन ।

दोहा ।

हेतु सहित जहँ बरनिये हेतु बान गहि रीति ।
हेतु अलङ्कृत सुकवि सब तहां कहैं गहि प्रीति ॥४८०॥

उदाहरन कवित्त ।

महत महातम की पंचकोसी जात्रा कहैं रघुनाथ सुनि बचन महासी के । हरष सों पागे अनुरागे बड़भागे लोग नगर बसैया सबै जोग भोग रासी के । परस पुरुषता के उर बोध बसिबे को बूझि के परम पद निर्भय बिलासी के । मूंदे सतोगुन में फिरत आस पास भए मालाकार युवा वृद्ध बाला बाल कासी के ॥

अपरंच कवित्त ।

परम असंक लङ्कपति मेरी बिनै सुनो पूर

पारावार को पहारनि भरो भयो । आवत ब संत ज्यों त्यों बन उपवन सब रघुनाथ हरो भयो फूलि कै फरो भयो ॥ करिबे जो है सो अब को जे जन्त मन्तन सों नगर बसैयन के बास को दुरो भयो । लोकन बिपति के हरैया राम ताकि आगे डबराये ईछन अभीकन खरो भयो ॥

इति श्रीरघुनाथ बन्दीजन काशीवासी विरचिते काव्य रसिकमोहने उपमादिक अलङ्कार वर्णनं सम्पूर्णम् ।

दोहा ।

कियो रसिकमोहन सुभग ग्रन्थ सुकवि रघुनाथ।
बिच बिच काशीन्द्रपति के कहे बिसद गुनगाथ ॥
अलङ्कार-लच्छन सहित लच्छ सहित सुविचारि ।
कारिकवित्त रसिकन लिये दिये सकल निरधारि ॥
सो द्विज रसिकन के लिये छपवायो करि सोध।
काव्यकला सब जानिहैं जे पढ़िहैं अविरोध॥

॥ इति श्री ॥